चन्दामामा

माँ-बच्चों का मासिक पत्र





ईर्ष्या

उन दिनों काशी राज्य का राजा ब्रह्मदत्त था। राजगृह में एक बनिये के एक लड़का था। उसका विवाह तो हो गया था, पर उसकी कोई सन्तान न थी।

उसकी पत्नी को, क्योंकि यह निस्सन्तान थी, उसकी सास नीची नजर से देखने लगी। एक दिन उसने अपनी सास को अपने आप यों बातें करता सुना-"शायद इसके भाग्य में बच्चे ही नहीं लिखे हैं। संसार के लिए यह निरी-बोझ है।" अपनी मान-मर्यादा को बचाने के लिए उसने अपनी सास से झूठमूठ कह दिया कि यह गर्भवती थी।

फिर उसने अपनी सेविका से जान लिया कि गर्भवती स्त्रियाँ प्रायः क्या क्या वाहती है। यह भी गर्भवती स्त्रियों की तरह सही सही चीज़, बढ़िया बढ़िया पकवान माँगने लगी। इस के साथ साथ पेट पर कपड़े-लते आदि बाँधकर उसने यह दिखाने का प्रयत्न किया कि उसका गर्भ बढ़ रहा था।

यह देख उसकी सास ने समझा कि सचमुच यह को गर्भ हुआ है। उसे बहुत प्रसन्नता हुई और तब से उसकी बहुत प्यार-परवाह करके देख-भाल करने लगी। कुछ महीनों बाद उसने अपने पति से कहा- "प्रसव के लिए मुझे मायके भेज दीजिये।" उसके पति ने अपनी पत्नी के इच्छानुसार उसके जाने के लिए गाड़ी का प्रबन्ध कर दिया और उसके साथ अनेक नौकर-चाकर भेजे।

वह अपने मायके जाते जाते, एक दिन सवेरे नित्य कृत्यों से निवृत्त होने के लिए, मार्ग के समीप ही, पेड़ों के झुरमुट में



गई। वहाँ एक पेड़ के नीचे उसे एक छोटा सा बच्चा दिखाई दिया।

कुछ समय पहले, उस रास्ते एक काफिला गया था। उस काफिले में एक गरीब स्त्री थी। उसने पेड़ के नीचे एक बच्चे को जन्म दिया। क्योंकि उसका वह पालन-पोषण न कर पाती थी, इसलिये उस बच्चे को वहाँ छोड़कर, यह आगे चली गई। वह बच्चा ही बोधिसत्व था।

उस गोरे, चमचमाते बच्चे को देखकर, वैश्य स्त्री फूली न समाई। उसने फौरन अपनी सेविका को अपने पास बुलाया और बच्चे को दिखा कर कहा-"मैं सब लोगों से यह कहूँगी कि यह लड़का मेरा है। तू भी सब से यही कहना कि तूने ही मेरा प्रसव कराया है।"

फिर उसने अपने पेट पर बन्धे कपड़े उतार कर फेंक दिये। बच्चे को लेकर वह वापस आ गई। सपने यह समझा कि वह उसका लड़का है। क्योंकि बच्चा रास्ते में ही पैदा हो गया था, इसलिये वह वापस अपने ससुराल आ गई। उसको बच्चे के साथ आता देख सब बड़े खुश हुए। फिर कुछ दिनों बाद लड़के का नाम निग्रोध कुमार रखा गया।

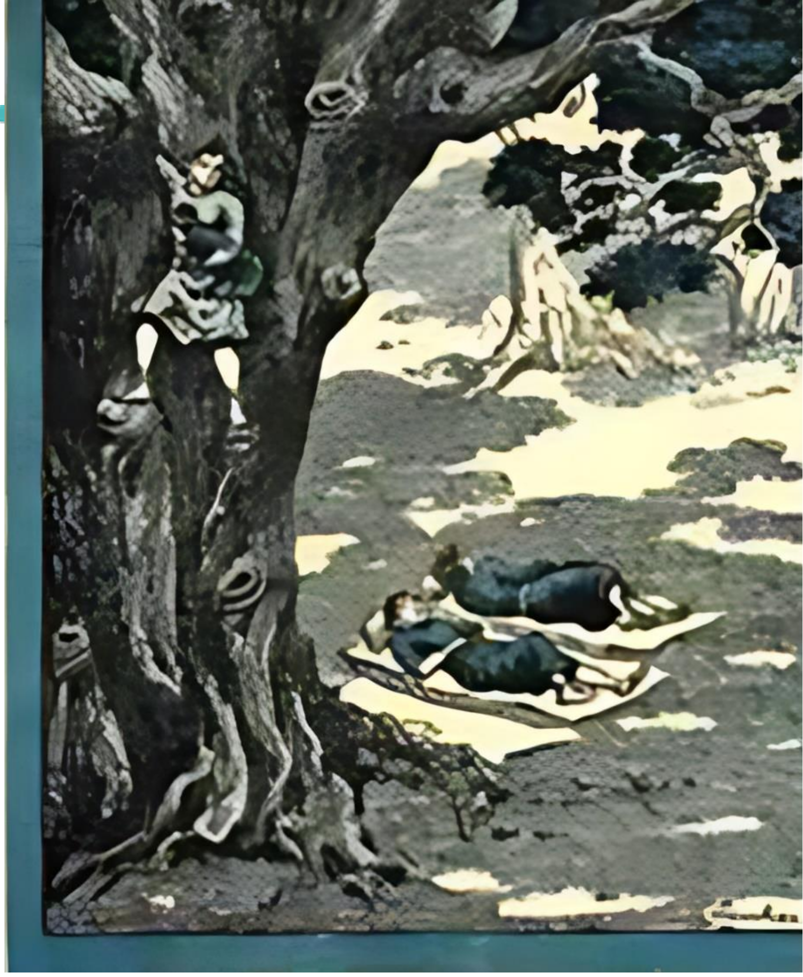
जिस दिन निग्रोध कुमार का जन्म हुआ था, उसी दिन राजगृह में, एक बनिये के शाखा कुमार नाम का लड़का और एक दर्जी के पोत्रिक नाम का लड़का पैदा हुआ। इसलिये उन तीनों को एक जगह पाला गया।

शिक्षा के लिए भी वे तीनों मिलकर तक्षशिला गये। वहीं एक ही गुरु के यहाँ उनकी शिक्षा-दीक्षा एक साथ हुई। जब तक वे यहाँ रहे, पोत्रिक का सारा खर्च निग्रोध ने ही सहर्ष उठाया।

तक्षशिला से, शिक्षा समाप्त होते ही, वे पैदल देश देखते देखते, कुछ दिनों बाद काशी पहुँचे। उनके नगर में पहुँचने से पहले अन्धेरा हो गया। उस दिन, एक मन्दिर के पास, पेड़ के नीचे सो रहे थे। सवेरा होने से पहले पोत्रिक उठा और निग्रोध के पैर दबाने लगा। तब एक विचित्र पटना पटी।

उस समय पेड़ की टहनी पर दो मुर्गियाँ बैठी हुई थीं। ऊपर की टहनी पर बैठी मुर्गी ने, नीचे की टहनी पर बैठी मुर्गी पर बीट कर दी। दूसरी मुर्गी को गुस्सा आगया, उसने कहा-"तुझे इतना घमण्ड? शायद तुझे नहीं मालूम कि मैं कौन हूँ। तू मेरा इतना अपमान करता है, मैं कोई मामूली मुर्गी नहीं हूँ! जानती हो, जो मुझे खायेगा, वह दस हजार मुहरें पायेगा और बड़ा धनवान हो जाएगा। क्या समझ रखा है?"

यह सुन ऊपर की टहनी पर बैठी मुर्गी ने कहा-"मैं भी कोई मामूली मुर्गी नहीं हूँ। जानती हो, मैं कौन हूँ? जो कोई मेरी चरबी खायेगा, वह राजा होगा। और जो मेरा कलेजा



खायेगा, वह सेनापति बनेगा और मेरी हड्डियों का माँस खाने वाला कोशाधिपति बनेगा।"

यह सुन पोत्रिक ने झट ऊपर की टहनी पर बैठी मुर्गी को पकड़ा और उसको पका भी दिया। जब मित्र उठे तो उसने निग्रोध को मुर्गी की चरबी, शाखा को कलेजा दिया और स्वयं हड्डी वाला माँस खाया। उसके बाद मित्रों को उस मुर्गी के बारे में सारी बात बताकर उसने कहा-"हम में निग्रोध राजा होगा। शाखा सेनापति, और मैं कोशाधिपति बनूँगा।"

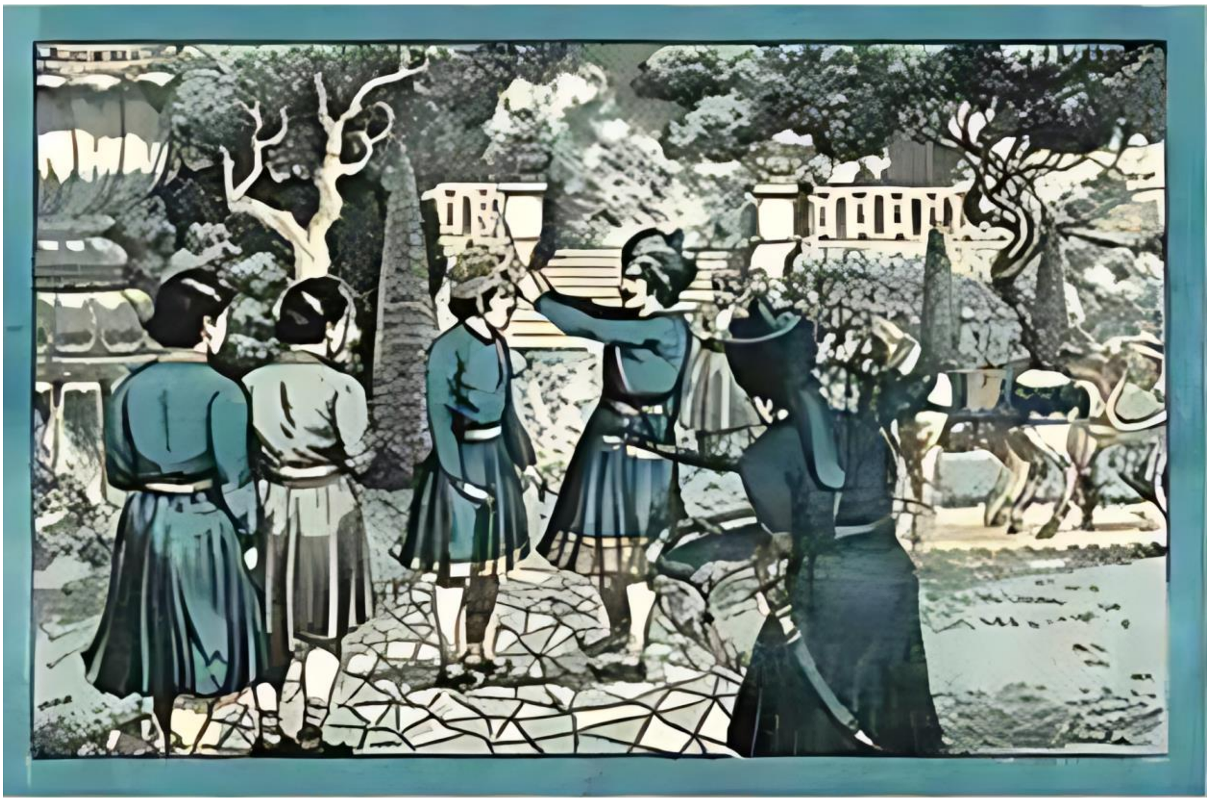
फिर वे काशी नगर में पहुँचे। उनके पहुँचने के सप्ताह भर पहले काशी का राजा मर गया था। उसके बाल-बच्चे न थे। नये राजा के निर्वाचन की घोषणा भी कर दी गई थी।

यह बात तीनों मित्र नहीं जानते थे। उस दिन तीनों ने एक ब्राह्मण के घर में भोजन किया। वहाँ से वे राजोद्यान में गये और पेड़ों के नीचे सो गये।

वे सो रहे थे कि उधर से राज पुरोहित एक थाल में राजोचित तलवार, पादरक्षक, छाता, चादर लेकर उस तरफ से रथ में गुजरे।

पुरोहित रथ से उतरे और उन्होंने तीनों को सोते हुए देखा। उसने उन तीनों के तलवे देखे। उनमें से एक के पैर में ही चक्र था। इसलिये उसने उसे ही राजा चुना। इस प्रकार चुना हुआ व्यक्ति निग्रोध था।

तब पुरोहित ने मङ्गल बाद्य बजाने के लिए कहा। मङ्गल बाद्य सुनकर तीनों मित्र घबराते हुए उठ खड़े हुए। उनके चारों ओर भीड़ जमा हो गई। निग्रोध जान गया कि उसे काशी का राजा चुना



गया था। उसने तुरन्त शाखा को सेनापति नियुक्त किया।

इसके बाद, निग्रोध ने शाखा से कहा-"क्योंकि हम यहाँ बड़े बड़े पद पर नियुक्त हुए हैं, इसलिये हम अपने माँ-बाप को यहाँ बुला लेंगे। वे यहाँ आराम से रहेंगे। तुम जाकर हम दोनों के माँ-बाप को बुला लाओ।"

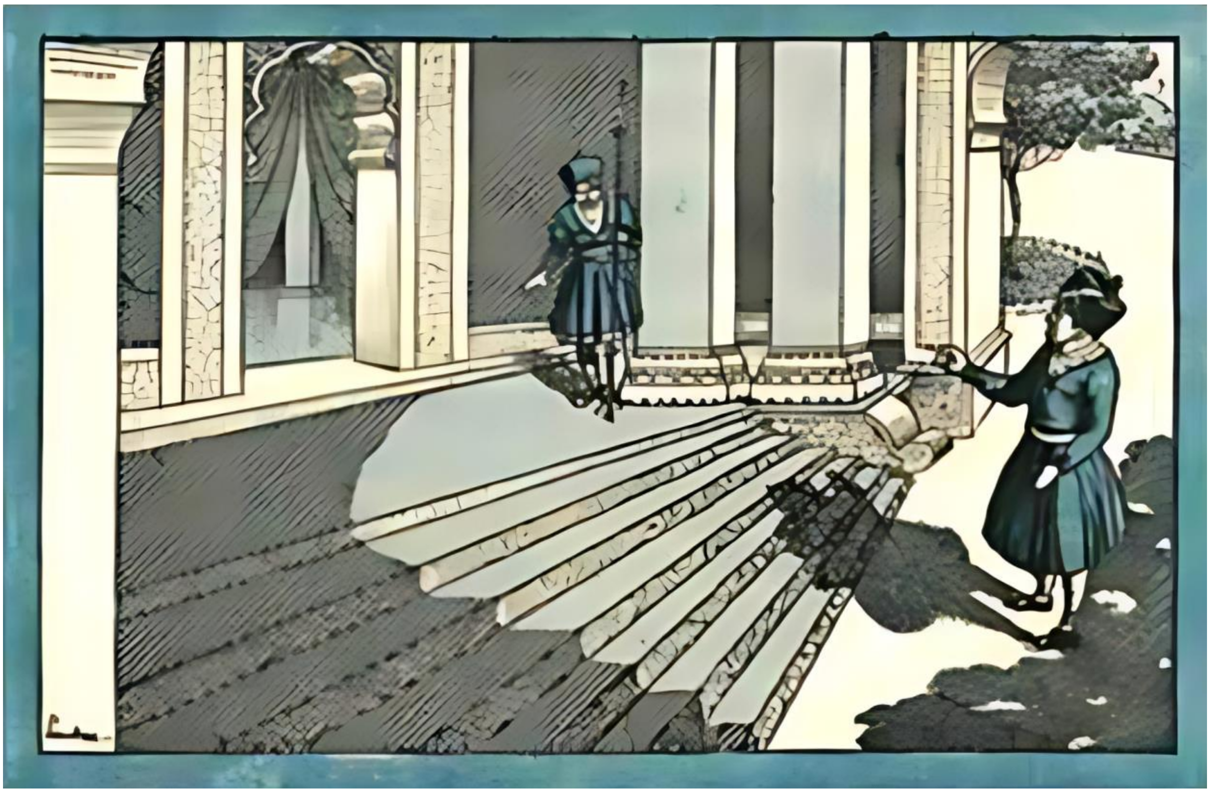
"इस काम के लिये आप मुझे भेजते हैं! यह मेरे गौरव के अनुकूल नहीं है।" शाखा ने कहा।

इसलिये इस काम के लिए निग्रोध ने पोत्रिक को नियुक्त किया। यह जाने को राजगृह गया तो, पर उसके साथ कोई आने के लिये तैयार न हुआ।

"हम यहाँ ही आराम से हैं।" उन्होंने कहा।

पोत्रिक काशी वापिस गया। भोजन कर, आराम करने के लिए वह शाखा के घर गया। उसने नौकरों से कहा-"मैं शाखा का मित्र हूँ। उससे कहो कि मैं आया हूँ।"

जब पोत्रिक ने उसको अपना मित्र बताया तो शाखा को गुस्सा आ गया क्यों कि उसने मुर्गी की चरबी उसको न देकर,



निग्रोध को दी थी, इसलिए वह उस पर बहुत दिनों से बिगड़ा हुआ था।

"इसे खूब पीट-पाट कर बाहर निकाल दो।" उसने नौकरों से कहा। नौकरों ने बैसा ही किया।

उसने पोत्रिक को पिटवा तो दिया, पर उसको यह फिक्र सताने लगी कि कहीं वह निग्रोध से उसकी शिकायत न करे। इसलिए यह तुरत निग्रोध से मिलने के लिए गया। उसका ख़याल था कि उसके सामने पोत्रिक, निग्रोध से शिकायत नहीं करेगा।

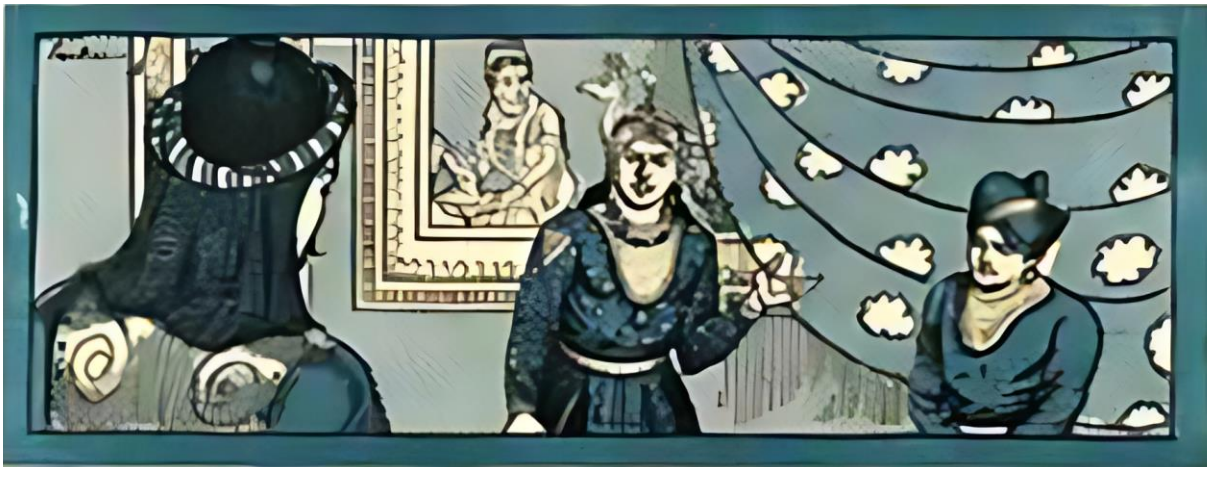
शाखा के पहुँचते पहुँचते पोत्रिक राजा के पास आ ही गया। शाखा के सामने ही पोत्रिक ने जो कुछ गुज़रा था, निग्रोध से कहा।

यह सुनकर निबोध तुरत शाखा पर आग-बबूला हो उठा।

"पोत्रिक स्वार्थहीन व्यक्ति है। यद्यपि तूने उसका कभी कोई भला नहीं किया, तब भी उसने तुझे खाने के लिए मुर्गी का कलेजा दिया। उसका कृतज्ञ रहना तो अलग, तूने उसको नौकरों से पिटवाकर उसका अपमान किया। तू सेनापति होने लायक नहीं है। मैं तुझे उस पद से निवृत्त करता हूँ।" निग्रोध ने कहा।

पोत्रिक ने बीच में आकर कहा-"हम तीनों बचपन के साथी हैं। एक दूसरे की गलती माफ़ करना धर्म है। इसे सेनापति के पद पर काम करने दो।"

निग्रोध ने दया करके शाखा को छोड़ दिया। तब उसने पोत्रिक को अपना कोशाधिकारी नियुक्त किया। उस पद का तभी निर्माण हुआ। उससे पहले राजाओं के पास कोशाधिकारी काम नहीं करते थे, ऐसा कहा जाता है।





[६]

[पद्मवाद और पिङ्गल भल्लूक पर्वत की घाटी में बहनेवाली नदी के पास गये। नदी के जल को सुखाने के लिए पद्मपाद ने समाधिस्थ हो मन्त्र-पाठ किया और पिङ्गल ने गदा ले कर उसकी रक्षा की। नदी का जल सुख गया। उसमें से मन्दिर के खण्डहर का शिखर दिखाई देने लगा। फिर...]

पद्मपाद ने थोड़ी देर तक मन्दिर के शिखर की ओर देखकर, महामायावी के शिष्यों को पास आने के लिए इशारा किया। वे दोनों मन्दिर के पास सड़े थे। पद्मपाद का इशारा पाकर वे चुटकी भर में पद्मपाद के पास आये। आते ही भय के कारण काँपते हुए, उन्होंने उसे नमस्कार किया।

"मुझे यह देखकर प्रसन्नता हो रही है कि तुमने मेरी आज्ञा का पूर्णतः पालन किया। अब तुम जहाँ चाहो वहाँ जा सकते हो। मैंने तुम्हें पूरी स्वतन्त्रता दे दी है।" पद्मपाद ने कहा।

महामायावी के शिष्य आपस में एक दूसरे की शक्ल देखने लगे। उनमें से एक ने हिम्मत बटोरकर, पद्मपाद को नमस्कार कर कहा- "महामान्त्रिक! हमारी प्रार्थना है कि आप कृपा करके हमारा निवेदन सुनें। आप जिस कार्य



में हमारी मदद चाहते थे वह कार्य तो पूरा हो गया है। कम से कम हमें अब तो मन्त्र के प्रभाव से कृपया विमुक्त कर दीजिये।"

"काम होने से पहले ही क्या तुम्हें मैं स्वतंत्र कर दूँ?" पद्मपाद यह कहकर अट्टहास करने लगा। थोड़ी देर रुककर फिर उसने कहा-"मैं जानता हूँ कि तुम मामूली पिशाच नहीं हो। तुम महादुष्ट, क्रूर पिशाचों में से हो, यह बात मुझसे नहीं छुपी है। इसलिए, जब तक में तुम्हारे गुरु की समाधि से, जो मैं चाहता हूँ, ले नहीं लेता, तब तक तुम्हें छोड़ने का मेरा इरादा नहीं है। यह बात याद रखो। समझे?"

पद्मपाद की बात सुनते ही महामायावी के शिष्यों के मुँह एकदम फीके पड़ गये। उन्होंने पद्मपाद के सम्मुख साष्टाङ्ग करके कहा-"महामान्त्रिक! हम आपके गुलामों के गुलाम हैं। जब से आपने अपनी मन्त्र-शक्ति से हमको पकड़ा है, तब से हमने पेट भर नहीं खाया है। हम शक्तिहीन हो गये हैं। हम पर दया कीजिए।" वे रोने लगे।

पिङ्गल को उन दोनों की बातें सुनकर उन पर बड़ी दया आयी। उसने पद्मपाद की ओर मुड़कर कहा-"पद्मपाद"। वह कुछ और कहना ही चाहता था कि पद्मपाद ने उसे रोक कर, महामायावी के शिष्यों से यों कहा:

"मैं जानता हूँ कि तुम इतने दिनों बिना खाये पिये उपवास कर रहे हो। अगर मैंने तुम लोगों पर रहम खाकर तुम्हें शिकार करने की शक्ति दी, तो तुम मुझे ही तुरन्त अपना शिकार बनाओगे। क्यों, में ठीक कह रहा हूँ न? बताओ।"

"आप जैसे महामान्त्रिक को क्या हम जैसे तुच्छ शिकार बनायेंगे?" महामायावी के शिष्यों ने दयनीय शक्ल बनायी।

पद्मपाद हँसा। उसने पिङ्गल के हाथ से जादू भरी गदा लेकर कहा-"तुम दोनों को मैं फिलहाल यह शक्ति देता हूँ कि तुम सिवाय मनुष्यों के, किसी को भी शिकार करके खा सकते हो। तुम अब क्या रूप चाहते हो?"

"पद्मपाद! इन्हें हाथी बना दीजिये। इस जङ्गल में वे आराम से जी सकेंगे।" पिङ्गल ने कहा।

"हाथी? महामान्त्रिक! हम हाथी नहीं बनना चाहते।" महामायावी के दोनों शिष्यों ने एक स्वर से कहा-"हाथी बना दिये गये तो हम केवल फल-पत्ते ही खा सकेंगे। हम शाकाहारी नहीं हो सकते। शाकाहार हमारे लिए विष के समान है।"

"अच्छा तो यह बात है, तो मैं तुममें से एक को शेर....." कहकर पद्मपाद ने महामायाबी के एक शिष्य के सिर पर गदा रखी। वह तुरत शेर बन गया। "और दूसरे को बब्बर शेर



बना दूँगा।" कहकर उसने दूसरे के सिर पर गदा रखी। वह फौरन बब्बर शेर हो गया।

पिङ्गल ने थोड़ी देर उनकी ओर आश्चर्य से देखकर कहा-"अब तुम जितना माँस चाहो, उतना खाओ। जाओ, उस जङ्गल में जाओ।" उसने शेर और चकबर शेर की पीठ थपथपाई। हिंस्र जन्तुओं के रूप में महामायाबी के शिष्य, भयङ्कर गर्जन करते हुए जङ्गल की ओर भाग गये।

पद्मपाद ने भी थोड़ी देर तक महामायावी के शिष्यों की ओर देखा, फिर उसने



पिङ्गल से कहा-"पिङ्गल, अब हमें बहुत सावधान रहना होगा। हमारे प्रयत्नों को बिफल करने के लिए, और मौका मिलने पर हमारा संहार करने के लिए कई दुष्ट शक्तियाँ कोशिश कर रही हैं। हमें सतर्क रहना चाहिए। खैर, आओ अब हम अपना काम करें। इस टूटे हुए मन्दिर का शिखर तुम्हें अच्छी तरह दिखाई दे रहा है न?" पिङ्गल ने सिर हिलाया।

"तो अब तुम्हें महामायावी की समाधि के पास जाना होगा। इस समाधि के समीप जाने के लिए तुम्हें छः द्वार पार करने होंगे। उन छः द्वारों का छः बड़े बड़े राक्षस पहरा दे रहे हैं। वे तुम्हारा नाश करना चाहेंगे। अगर तुम उन्हें देखकर जरा भी डरे, तो न केवल हमारा काम ही न होगा, परन्तु हो सकता है कि हम मारे भी जायें।" पद्मपाद ने कहा।

पिङ्गल ने कोई जवाब न दिया। उसकी नज़र नदी के गर्भ में स्थित मन्दिर की ओर ही थी। पद्मपाद ने उसे देखकर कहा-"पिङ्गल! आओ, अब हम मन्दिर की ओर चलें। उसके छः दरवाजों में से, मैं पहले दरवाजे तक आ सकता हूँ। उस दरवाजे के खोलने के बाद, तुम्हें ही बाकी पाँच दरवाजों को खोलकर, समाधि के पास जाना होगा।"

पद्मपाद और पिङ्गल सूखी नदी में से, जिसमें एक बून्द भी पानी न था, पैदल चलकर टूटे हुए मन्दिर के पास पहुँचे। देवालय का पहला द्वार देखनेवालों में कँपकँपी भी पैदा कर देता था। देवदारु के बने हुए बड़े बड़े किवाड़ों पर भयङ्कर मूर्तियाँ खुदी हुई थीं। दोनों किवाड़ों को बन्द करनेवाले, दो बड़े कीलों से

लिपटा लिपटा एक साँप फुँफकार रहा था। पद्मपाद ने उस सर्प की ओर हाथ उठाकर कहा-"पिङ्गल! तुम निर्भय हो उस साँप के पास जाओ और उस पर तुम दो बार हाथ उठाओ। फिर अन्दर से, कोई भयङ्कर आवाज में तुम से कुछ प्रश्न पूछेगा। जब तुम निर्भय हो सब बताओगे तो दरवाजा खुल जायेगा। मगर उसके बाद क्या होगा, अगर मैं कहने लगूँ तो मेरी मन्त्र शक्ति ही बेकार हो जायेगी। यदि तुम कहीं डरे नहीं, तो सब द्वार खुलते जायेंगे, और तुम महामायावी की समाधि तक पहुँच सकोगे।"

"पद्मपाद! मैं किसी भयङ्कर शक्ति को देखकर भी न भयभीत होऊँगा। परन्तु इस मन्दिर में ऐसी कोई शक्ति तो नहीं है, जो मुझे धोखा देकर मार सके?" पिङ्गल ने पूछा।

"इस मन्दिर में कई ऐसी शक्तियाँ हैं, जो तुम्हें बिना धोखा दिये ही मार सकती हैं। यदि निर्भय हो तुम आगे बढ़ सके, तो तुम्हारा कुछ न बिगाड़ सकेंगी। जब तुम समाधि से हमारे लिए जरूरी चीजें ले आओगे, तब इस संसार में तुम से अधिक



शक्तिवान और धनवान कोई न होगा।" पद्मपाद ने कहा।

"इसलिए तो में इतने खतरों का सामना करने के लिए तैयार हुआ हूँ।" कहता हुआ पिङ्गल आगे बढ़ा और पद्मपाद उस स्थल की ओर पीछे गया, जहाँ समाधिस्थ होकर उसने मन्त्र-पाठ किया था।

पिङ्गल निर्भय हो द्वार के पास पहुँचा। फुँफकार मारते हुए सर्प की ओर उसने अपना दायें हाथ दो बार उठाया। वह भयङ्कर साँप निष्प्राण-सा हो गया। परन्तु



उसी समय दरवाजे के पीछे भयङ्कर शब्द हुआ। कर्कश स्वर में, एक आवाज ने यह पूछा-"यह डरपोक कौन है, जो अन्दर कैसे जाये जाय, यह जाने सौर ही, समाधि के प्रथम द्वार के पास आया है।"

"मेरा नाम पिङ्गल है। मैं अवन्ती नगर का मछियारा हूँ। मेरा गुरु पद्मपाद है।...."

"बस बस! में यह नहीं जानना चाहता कि तेरा गुरु कौन है। तू मछियारा पिङ्गल है। इसलिए यह द्वार खोल रहा हूँ।" यह आवाज हुई।

तुरत फिवाड जोर से खुल गये। एक पहाड़-सा काला-कलूटा आदमी, चमचमाती तलवार हाथ में लेकर, रास्ता रोके खड़ा था। पिङ्गल निर्भय हो आगे बढ़ा।

तलवार की पहुँच तक पिङ्गल गया ही था कि पर्वताकार व्यक्ति ने हुँकार करते हुए पूछा-"क्या तू मछियारा पिङ्गल ही है? तू अपना गला दिखा, जिससे कि एक चोट में ही यह धड़ से अलग हो जाये।"

झट पिङ्गल ने एक निश्चय किया। वह यह जान गया कि इतनी दूर आकर वापस जाना ख़तरे से खाली न था। अगर उसने अपना गला दिखाया तो उस भयङ्कर व्यक्ति की तलवार उसे काट सकती थी। कुछ भी हो, यह सोचकर पिङ्गल ने एक कदम आगे रखा। उसने गला झुकाया। तुरन्त उस महाकाय मनुष्य के हाथ से तलवार नीचे गिर गई। वह पिङ्गल के सामने शव की तरह गिर गया।

यह देखकर न जाने कहाँ से पिङ्गल में असाधारण धैर्य और साहस आ गया। उसने सीना तानकर, पहला द्वार पार

किया। वह दूसरे द्वार के समीप गया। उस द्वार के किवाड़ भी बन्द थे। यहाँ एक घुड़सवार खड़ा था। उसके हाथ में एक भाला था। पिङ्गल को देखकर, निशाना ठीक कर, वह बिना कुछ कहे, पिङ्गल की छाती पर कूदा। पिङ्गल ने छाती पर से अपना कुड़ता उठाकर कहा- "जानते हो मैं कौन हूँ? मैं मछियारा पिङ्गल हूँ।" कह कर वह आगे बढ़ा। तुरत घोड़े के साथ, घुड़सवार भी जमीन पर ढेर-सा हो गया। पिङ्गल द्विगुणित उत्साह से दूसरा द्वार पार कर तीसरे द्वार पर पहुँचा।

तीसरे द्वार के सामने एक तीरन्दाज धनुष पर बाण चढ़ाये पिङ्गल की ओर देखना खड़ा था। पिङ्गल बिना डरे आगे बढ़ता गया। उसने तीरन्दाज को अपना माथा अंगुली से दिखाया। फिर क्या था, तीरन्दाज एक तरफ गिर गया। पिङ्गल ने तीसरा दरवाजा भी पार कर लिया। यह चौथे दरवाजे के पास पहुँच रहा था कि उसे भयङ्कर चीत्कार सुनाई दिया। द्वार के पास दो गैण्डे उस पर कूदने के लिए तैयार खड़े थे। निर्भय



हो पिङ्गल आगे बढ़ा और उसने गैण्डों के सींघों को अपने हाथ से छुआ। तुरन्त में राख राख हो गये।

जब पिङ्गल पाँचवें दरवाजे के पास पहुँचा तो वहाँ इसे एक बिचित्र पशु दिखाई दिया। उसे देखकर, उसको भय की अपेक्षा आश्चर्य अधिक हुआ। उसका शरीर और पिछले पैर शेर के जैसे थे। सिर और आगे के पैर गिद्ध के जैसे थे।

"यह क्या पशु है!" पिङ्गल सोच हो रहा था कि वह गरूड़ सिंह, पिछले पैरों पर खड़ा हो, पंख फड़फड़ाता पिङ्गल पर कूदने को तैयार हुआ।

पिङ्गल एक क्षण तो स्तब्ध खड़ा रहा, फिर उसने कुछ सोचकर कहा-"हट रास्ते से। मैं मछियारा पिंगल हूँ।" वह आगे बढ़ा। गरुड़ सिंह फूट-सा पड़ा और उसके टुकड़े टुकड़े हो गये। पिङ्गल को उसे देखकर दया आई। पाँचवा द्वार पार कर वह छठे द्वार के पास गया।

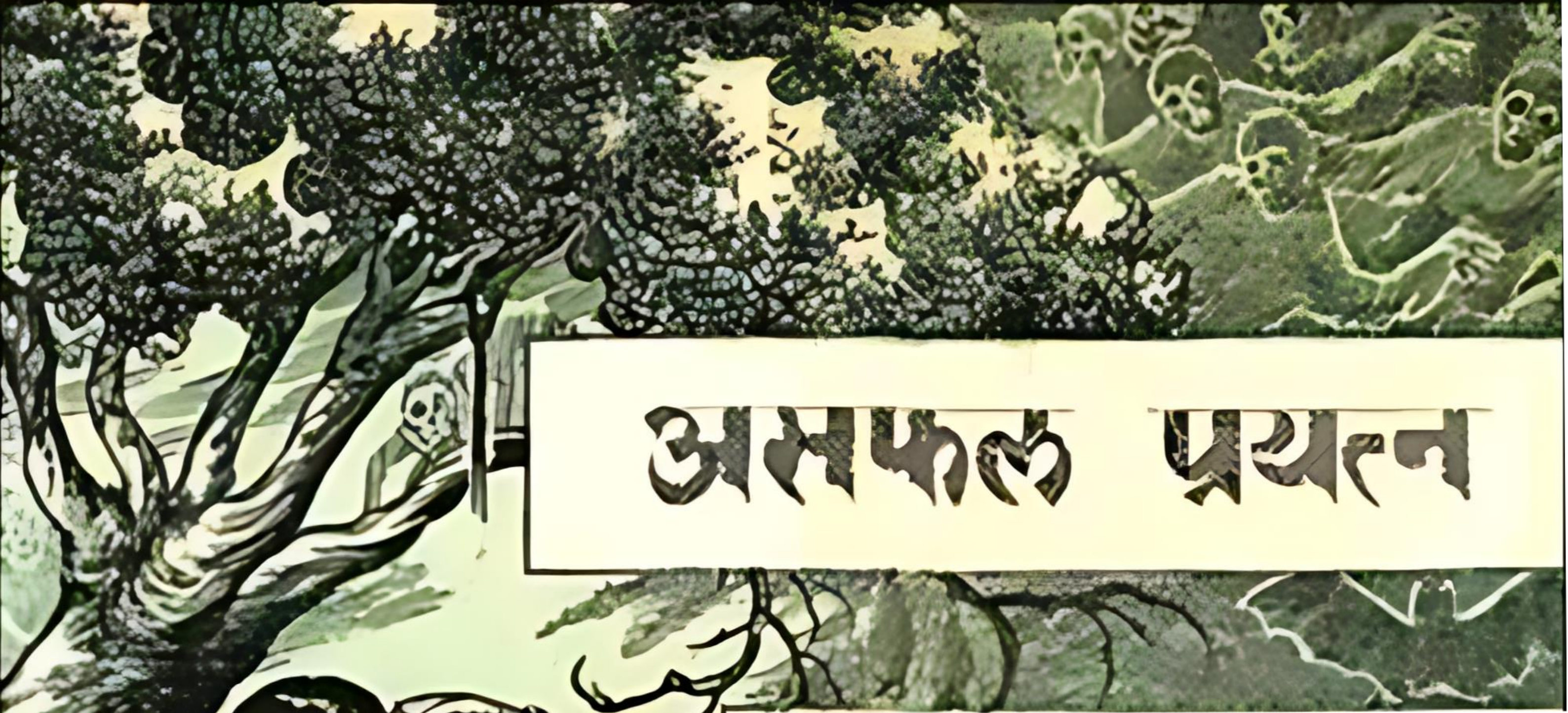
जब उसे यह ख़याल आया कि छठा द्वार पार करते ही वह महामायावी की समाधि के पास पहुँच सकेगा, पिङ्गल बड़ा प्रसन्न हुआ। अंगूठी, बज्रों से जड़ी तलवार, भूगोल का ग्लोब ये तीनों चीजें उसको लानी थी।

पिङ्गल अमित उत्साह के साथ छठे दरवाजे के पास गया। वह यकायक चौका। सामने दरवाजे के पास पद्मपाद गदा लेकर खड़ा था। पिङ्गल, मूर्छित-सा आगे बढ़ने को ही था कि "ठहरो, ठहरो, तुम कौन हो?" उसे भयङ्कर आवाज सुनाई दी। "मेरी आँखों में धूल झोंकने के लिए किसी राक्षस ने पद्मपाद का रूप धर लिया है।" पिङ्गल सोच रहा था कि चमकती हुई वह गदा उसकी आँखों के सामने चक्कर काटने लगी। पिङ्गल भयभीत हो पीछे हटा।

"कोई चोर है। मछियारा पिङ्गल नहीं है। इसे बाहर हटाओ दूर फेंक दो।" किसी का यह चिल्लाना पिङ्गल को सुनाई दिया। फिर उसकी पीठ पर, सिर पर, कोई डण्डे और हाथ से मारने लगा। एक एक द्वार, एक के बाद एक बन्द होता गया। पिङ्गल ने भय से काँपते हुए, जब बन्द आँखें खोली तो वह हवा में उड़ा जा रहा था और नीचे पद्मपाद हाथ फैलाये खड़ा था ताकि वह नीचे न गिर जाये।

(अभी और है)





असफल प्रयत्न



हताश होना विक्रमार्क न जानता था। वह फिर पेड़ के पास गया। शव को उतार कर, कन्धे पर डाल वह चुपचाप शमशान की ओर चल पड़ा। तब सब में स्थित बेताल ने कहा-"सिर्फ हट से काम नहीं चलता, कार्य में सफलता प्राप्त करनी होगी। किसी जमाने में नन्द को भी यही भुगतना पड़ा था। उसकी कहानी सुनाता हूँ, सुनो।" उसने इस प्रकार कहानी सुनानी शुरू की:

बहुत पहले पश्चिम में, मछियारों का एक गाँव था। उस गाँव में बीस घर थे। ग्राम के बीच में एक देवी का मन्दिर था। उस देवी के सामने मनौती करने से खूब मछलियाँ मिलती थीं। जब तुफान आता तो वे उसकी पूजा करते और देवी उनकी

रक्षा करती। सब मछियारे उस देवी पर जान देते थे।

उन लोगों में, परम्परा के अनुसार सबसे अधिक समर्थ, अनुभवी और योग्य व्यक्ति को मुखिया चुना जाता था। प्रायः जो उस गाँव में पैदा होता, वहीं अपना धन्धा करता, और मिट्टी में मिल जाता। पर कभी कभी ऐसा भी होता था कि नौजवान, बड़े बड़े जहाजों में नौकरी कर लेते थे, और जहाजों में द्वीपान्तर हो जाते थे। इनमें से कई किस्मत के मारे जहाज के साथ डूबकर मर भी जाते थे और बाकी खूब धन कमा कर बड़े बड़े नगरों में आराम से रहना शुरू कर देते। इसलिये नौजवानों का इस तरह गाँव छोड़कर चले जाना बड़े बुजुगों को पसन्द न था।

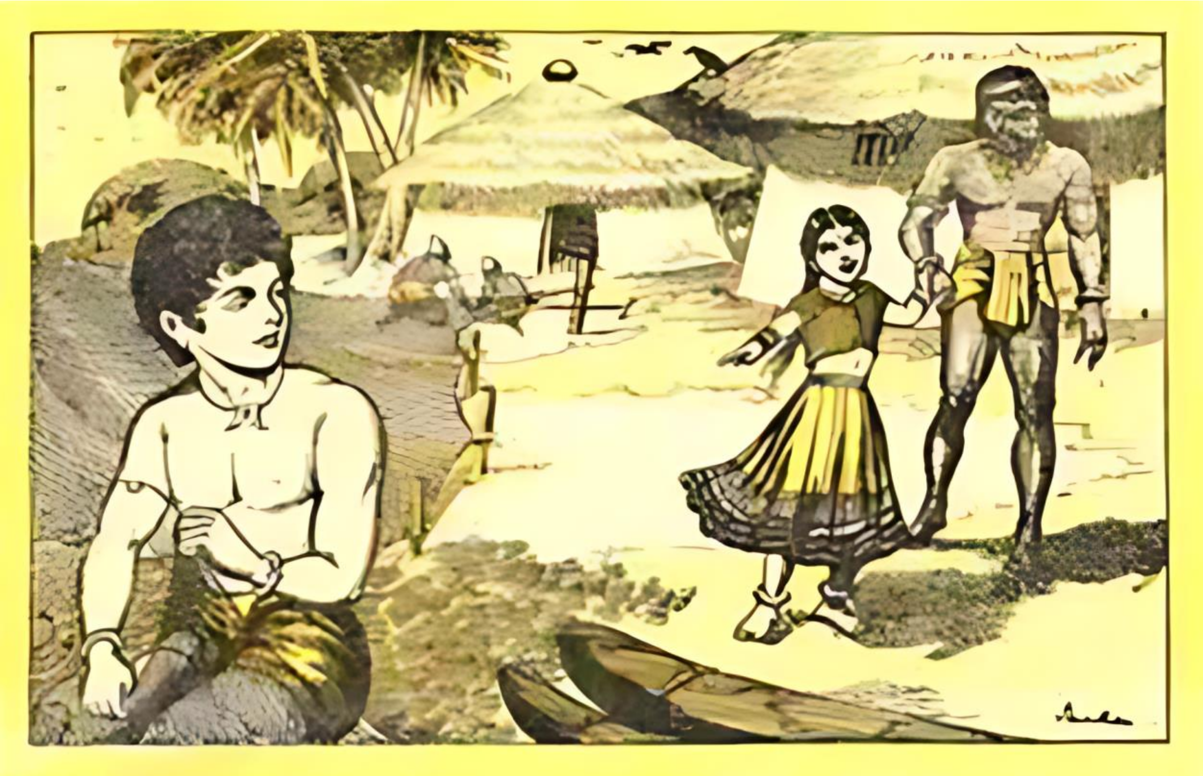
नन्द, मुखिया का दूसरा लड़का था। उसका भाई सुन्द उससे काफी बड़ा था। जब उसकी उम्र केवल सात वर्ष की ही थी कि उसका पिता गुजर गया। रेणुक नाम का व्यक्ति मछियारों का मुखिया चुना गया। सुन्द ने पिता से मछली पकड़ना सीखा था। इसलिए वह अकेला तमेड़ में मछली पकड़ने

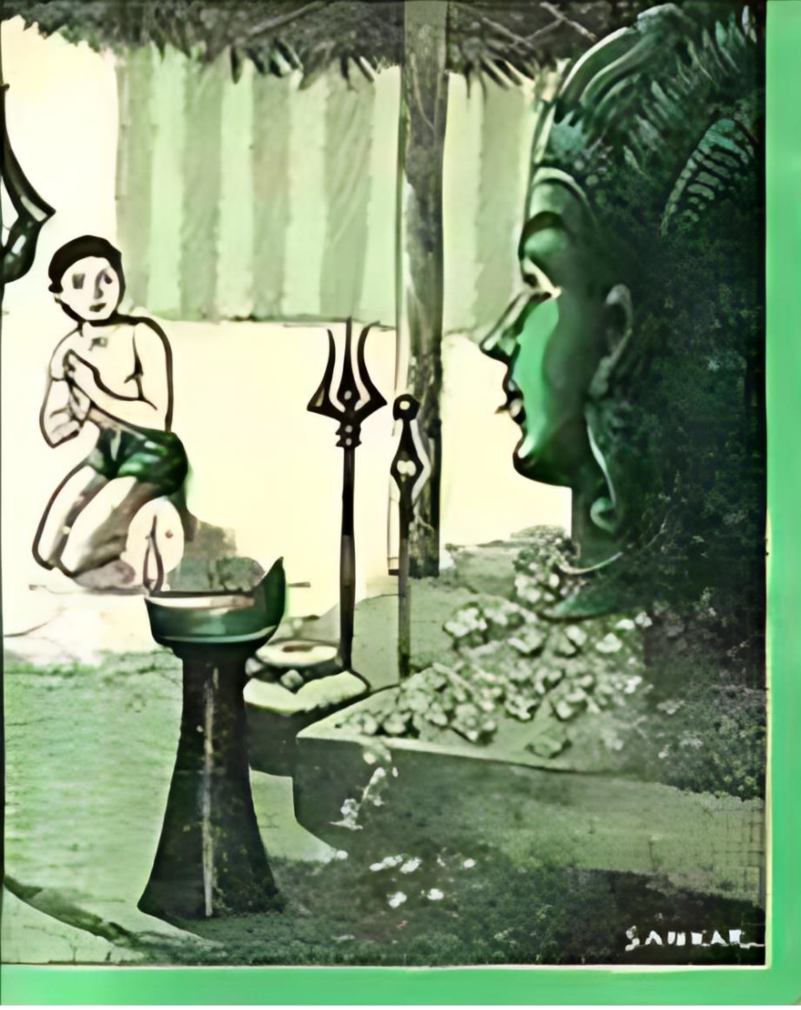


निकल जाता था। वह सब कुछ जानता था। परन्तु नन्द को कतई कोई अनुभव न था। इसलिये उसकी माँ ने उसको, रेणुक के यहाँ, मछली पकड़ना वगैरह सीखने के लिए रखा।

नन्द बड़ा चुस्त और तेज़ था। साहस की भी उसमें कभी न थी। इसलिये रेणुक उसकी बड़ी प्रशंसा करता। गाँव में उसके बारे में सब आश्चर्य किया करते। "अगर ऐसा नौजवान नाविक बन गया, तो बहुत कमाएगा।" मछियारे यह कभी कभी उसके बारे में कहा करते। तुरन्त नन्द की माँ कहा करती-"मैं यह हरगिज़ कभी न मानूँगी।"

रेणुक के एक लड़की थी। उसका नाम सुन्दरी था। वह नन्द से दो वर्ष छोटी थी। क्योंकि नाम के अनुकूल वह सचमुच सुन्दर थी, इसलिये सब उसको लाड़-प्यार करते। एक दिन रेणुक ने मजाक में पूछा-"जब तुम बड़ी होगी तो किससे विवाह करोगी?" तो उसने जवाब दिया-"और किससे? वह जो नन्द बैठा है, उससे। मैं किसी और से शादी नहीं करूँगी। हाँ।"





वह अकेला मन्दिर गया और देवी को सम्बोधित करके उसने कहा-"अगर तूने मुझे खूब धन दिया, तो मैं समुद्र के किनारे तेरे लिए एक ऐसा मन्दिर बनाऊँगा, जो दो कोस दूर से दिखाई दे। तब मैं और सुन्दरी विवाह कर लेंगे, और रोज़ तेरी प्रार्थना करेंगे।" फिर उसने अपनी माँ के पास जाकर कहा-"माँ! मैं नाविक बन जाऊँगा।"

माँ यह सुनकर भौंचक्का रह गई। उसने अपने लड़के को समझाया बुझाया-"बेटा! तुम दोनों मेरे लिये मेरी दोनों आँखों के बराबर हो। अगर तू चला गया तो में कानी हो जाऊँगी। इस छोटी उम्र में तू नाविक कैसे बनेगा? अगर तूने रुपया-पैसा कमा भी लिया तो तू वापिस नहीं आयेगा।" उसकी माँ ने कहा।

नन्द ने शपथ की कि वह अवश्य वापिस आयेगा। उसने माँ से देवी के सामने की हुई मनौती के बारे में भी वह दिया। वह नाविक बनने को उतावला

यह सुनते ही नन्द के मन में तूफान सा उठ आया। वह सुन्दरी को बहुत पसन्द करता था। पर जब उस लड़की ने कहा कि सिवाय उसके, वह किसी और से विवाह न करेगी, तो उसको अपना सारा भविष्य सामने स्पष्ट दिखाई देने लगा। सात-आठ वर्ष में सुन्दरी विवाह के योग्य होनेवाली थी। तब दोनों का विवाह होगा। "इसलिये इस बीच में ही बहुत-सा धन कमाना होगा। इस गाँव में मछली पकड़ते रहने से पैसा न जमा हो सकेगा। इसलिये किसी जहाज में नौकरी करनी होगी। क्या यह सब मैं कर सकूँगा?" नन्द इस उधेड़बुन में रहता।

हो रहा था। वह अपना इरादा बदलने को तैयार न था। माँ मान गई। नन्द तुरत गाँव छोड़कर चला गया।

कहना होगा कि देवी ने उसकी इच्छा पूरी की। क्योंकि जहाज में उसको नौकरी मिल गई। यह चुस्त था ही, नौकरी में उसकी चुस्ती ने उसकी काफी मदद की। कितनी ही बार उसने जहाज के व्यापारियों की रक्षा की। तूफान में जब अनुभवी नाविक घबरा जाते थे, उसने होशियारी से जहाज चलाया। उसकी कार्य कुशलता को देखकर कितने ही व्यापारियों ने उसको इनाम दिया। अपने लाभ में उसे भी हिस्सा दिया। उसने बहुत-सा रुपया कमा लिया।

आठ वर्ष उसने नाविक के रूप में काम किया। खूब धन कमाकर वह अपने गाँव लौटा। उसके आने के दो साल पहले ही सुन्दरी, सुन्द की पत्नी बन चुकी थी। नन्द की आशाओं पर पानी फिर गया। उस सुन्दरी के लिए ही इतनी मुसीबतें झेलकर, वह इतना धन कमाकर लाया था। अब उसे अपना भविष्य अन्धकारमय लगने लगा।



सुन्दरी के अतिरिक्त वह किसी और विवाह नहीं करना चाहता था। क्योंकि पिछले आठ साल से यह सुन्दरी को अपनी पत्नी मानता आ रहा था।

परन्तु सुन्दरी नन्द को कभी की भूल चुकी थी। उसे अपनी ही बात-- सिवाय नन्द के मैं किसी और से शादी नहीं करूँगी --याद न रही। नन्द के गाँव छोड़कर चले जाने के चार वर्ष बाद सुन्दरी के पिता का देहान्त हो गया। सुन्दरी और उसकी माँ का पालन-पोषण करनेवाला कोई आदमी न था। उनके घर रोटी

के लाले पड़ने लगा। इस बीच सुन्द मछली पकड़ने में बहुत प्रवीण हो गया। उस गाँव में सुन्दरी से विवाह करने के लिए उससे अधिक योग्य कोई न था। क्योंकि उसने, सुन्दरी और उसकी माँ की आपत्ति में सहायता की थी; इसलिए उसके साथ उसने शादी कर ली। यह सब जान लेने के बाद नन्द किसी को दोष न दे सका। परन्तु मन ही मन वह सुन्दरी को चाहता रहा। उसके मन में यह दुर्बुद्धि भी आई कि सुन्दरी को किसी दूर देश ले जाकर उसके साथ विवाह कर लिया जाये। उसने अपना यह विचार सुन्दरी को भी बताया। सुन्दरी ने इसके बारे में अपनी सास से कहा।

नन्द की माँ को अपने लड़के की स्थिति देखकर बड़ा क्षोभ हुआ। उसने अलग ले जाकर उससे कहा- "बेटा! कुटुम्ब पर कलङ्क लगानेवाली ऐसी खराब चालें तूने कहाँ से सीखी है? देश-देश घूम फिर कर क्या तू इतना बड़ा हो गया है? तेरे लिए मैं और तेरी भाभी अलग अलग हैं? अपने सुख के लिए तू अपने भाई के घर में आग लगाएगा? तूने काफी रुपया



कमा लिया है। तू कहीं भी आराम से रह सकता है। इस गाँव में तुझे यों जलता में नहीं देख सकती। कहीं और चला जा।"

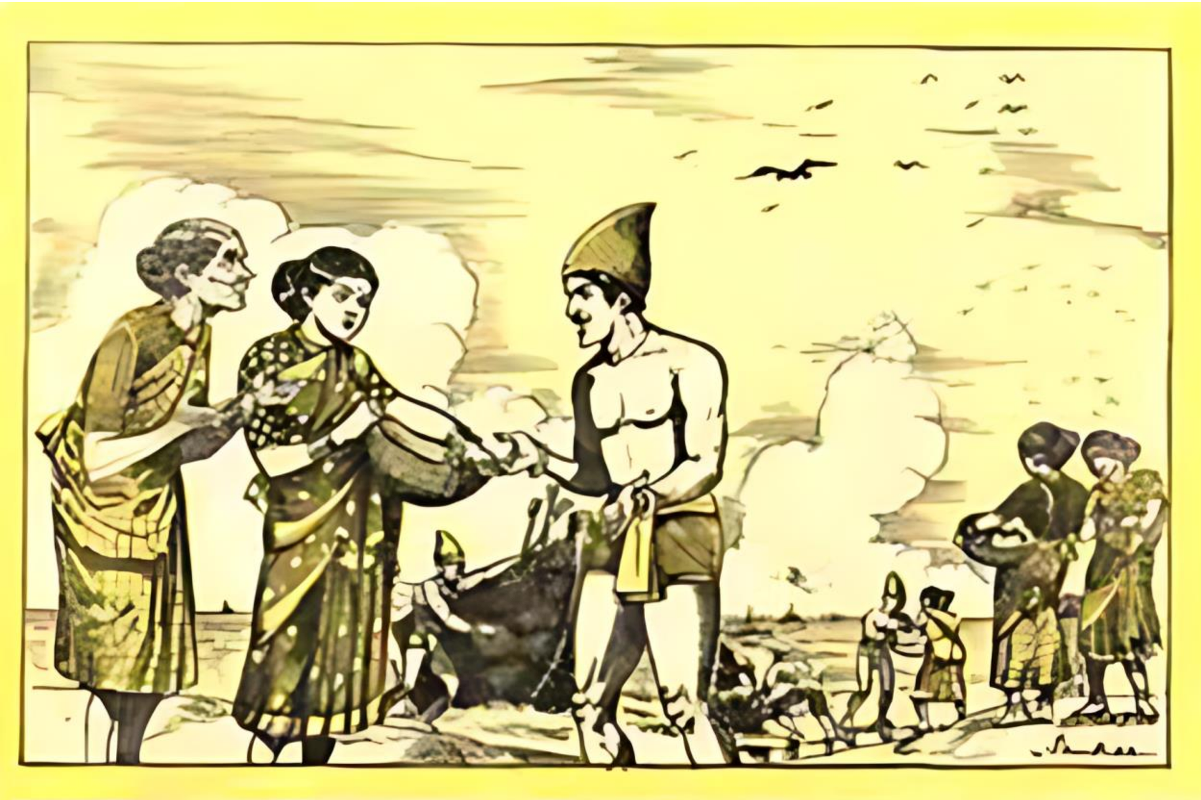
"अच्छा माँ। मैं चला जाऊँगा।" नन्द ने सिर नीचा करके कहा।

अगले दिन सवेरे, सुन्द जब तमेड़ लेकर मछली पकड़ने जा रहा था, तब नन्द ने कहा-"भाई! मछली पकड़े बहुत दिन हो गये हैं। आज मैं भी एक तमेड़ लेकर मछली पकड़ने आऊँगा।"

दोनों भाई, अलग अलग तमेड़ लेकर समुद्र में एक एक करके निकल पड़े।

सूर्यास्त होने से पहले सुन्दरी और उसकी सास, भोजन लेकर समुद्र के किनारे पहुँची। थोड़ी देर में सब वापिस आ गये। मगर नन्द वापिस न आया। उसको ढूँढ़ने के लिए, सुन्द और कई मछियारे समुद्र में वापिस गये। पर उनको उसकी मेड़ ही दिखाई दी। नन्द का कहीं पता न था। उसने समुद्र में कूदकर आत्महत्या कर ली थी।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा- "राजा! मुझे एक सन्देह हो रहा है। नन्द की असफलता और निराशा का



कौन कारण था? क्या वह देवी थी, जो उसकी इच्छा को पूरा न कर सकती थी या सुन्दरी, जिसने उसमें कई आशाएँ पैदा की और आखिर उसके भाई से विवाह कर लिया या नन्द की माँ, जिसने उसके रास्ते में अड़चनें पैदा की? अगर जान बूझकर तुमने उत्तर न बताया तो तुम्हारा सिर फूट जायेगा।"

"इसमें देवी का कोई दोष नहीं है। अगर सुन्दरी के साथ विवाह करना ही उसका उद्देश्य था तो देवी से वह वह बर माँग सकता था। नन्द ने वह नहीं किया। यह इस अहङ्कार में रहा फि जब वह खूब धन कमाकर वापस आयेगा तो वह आसानी से सुन्दरी से विवाह कर सकेगा। सुन्दरी का भी इसमें कोई कसूर नहीं है। जब उसने कहा था कि वह नन्द से विवाह करेगी, यह एक नादान उड़की थी। वह अपने उस वचन के लिए जिम्मेवार नहीं ठहराई जा सकती। उसकी माँ का भी कसूर नहीं है। वह शुरू से ही नन्द के हित की बात कहती आई थी। अगर वह उसकी बात मानता और जहाज में नौकरी करने न चला जाता तो सुन्दरी उसी की पत्नी होती। वह माँ की सालाह सुने बगैर चला गया। वह दोनों लड़कों का सुख चाहती थी। वह छोटे लड़के के सुख के लिए, बड़े लड़के का सुख नष्ट करना नहीं चाहती थी, न कुटुम्ब पर वह कलङ्क लगता देखना चाहती थी। नन्द की दुर्बुद्धि ही उसकी मृत्यु का कारण है। उसी का दोष है।" विक्रमार्क ने कहा।

इस प्रकार राजा का मौन भङ्ग होते ही, बेताल शब के साथ अदृश्य हो गया और वृक्ष पर जा बैठा।





नाई का चरित्र

किसी जमाने में बगदाद शहर में एक करोड़पति रहा करता था। उसका एक ही लड़का था। उसका नाम था कमर। पिता के बाद, वह पिता की सम्पति का उत्तराधिकारी बना। उसके कई नौकर चाकर थे। वह बैभव के साथ रहने लगा। पोशाक, या खाने-पीने की चीजों में वह कभी कोई कमी न होने देता। परन्तु न मालूम, यह स्त्रियों से क्यों दूर भागता था- इसी कारण यह विवाह भी न करना चाहता था।

एक बार एक तङ्ग गली से वह जा रहा था कि सामने से स्त्रियों की एक झुण्ड आया। क्योंकि वह औरतों को पसन्द नहीं करता था, इसलिए उनके पास आने से पहले ही, वह पासवाले बगीचे में चला गया और एक तने पर उल्टा मुँह करके लेट गया। ठीक उसी समय सामने के घर से एक युवती आई और पौधों को पानी देने लगी।

यह स्त्रियों की साया से भी बचता आया पर न मास क्यों, कमर उसको देखते ही, उस पर मोहित हो गया। उसका मुँह, उसको चन्द्रमा की तरह लगा। वह यह सोच ही रहा था कि वह किसकी लड़की है, और उससे विवाह किया जा सकता है कि नहीं, इतने में उस घर में बग़दाद शहर का काजी नौकर-चाकरों साथ घुसा। कमर ने सोचा, जो युवती उसने देखी थी, वह काजी की ही लड़की है, इसलिए उसकी शादी उससे होनी नामुमकिन थी। वह निराश अपने पर लौट गया।

उसके हाव-भाव देखकर उसके नौकर चाकर बड़े चिन्तित थे। "आप क्यों ऐसे

श्री अमरनाथ अग्रवाल

हैं। क्या तबीयत ठीक नहीं है? क्या हकीमों को बुलायें?" उन्होंने अपने मालिक से पूछा। कमर ने उनसे सच न कहा। पर घर में रहनेवाली एक बूढ़ी आया ने सब कुछ मालूम कर लिया। "इतने दिनों बाद, तुम्हारे मन में किसी के लिए प्रेम जगा है। बताओ, वह कौन है? मैं उसके साथ तुम्हारी शादी कराने का करूँगी।"



उसके यह कहते ही कमर का दुख आधा हो गया। उसने बुढ़िया से, सब कुछ विस्तार पूर्वक सुना दिया।

"काज़ी की लड़की ही न? मैं उसे अच्छी तरह जानती हूँ। उसे शादी के लिए मनाना मेरा काम रहा। तुम फिक्र न करो।" उसने अपने मालिक को ढाढस बँधाया। परन्तु बुढ़िया का पहला प्रयत्न विफल रहा। काजी की लड़की से मिलकर कमर के बारे में उसने कहना शुरू ही किया था कि यह झुँझलाती हुई उठी-"तेरा मालिक कौन हैं, में नहीं जानती। अगर तूने इस तरह की बातें मुझ से की तो पिताजी से कहकर मैं तुझे जेल भिजवा दूँगी।" उसने कहा।

पर बुढ़िया हिम्मत हारनेवाली न थी। दो दिन बाद, जब काज़ी घर में न था, यह उसके सामने जाकर रोने-धोने लगी। "अब क्या होगा? मालिक नहीं बचेगा। मैंने उसे अपने लड़के की तरह पाला-पोसा है। उसने जब से तुझे देखा है, तब से चारपाई पकड़ ली है। रोज रोज काँटे की तरह सूखा जा रहा है।" बुढ़िया ने रोते-चिल्लाते कहा।

काज़ी की लड़की का हृदय जरा नरम पड़ा। "तुम्हारा मालिक पागल-सा मालूम होता है। एक स्त्री के लिए क्या कोई यूँ

मरा करता है। आनेवाले शुक्रवार को जब मस्जिद में नमाज पढ़ी जा रही हो, तब उसे जरा हमारे घर आने के लिए कहना। मैं उससे बातचीत करके जान लूँगी कि वह कैसा आदमी है। अगर यह बात पिता जी को पता लग गई तो बड़ा खतरा है।" उस लड़की ने बुढ़िया से कहा।

"तूने हमारे मालिक की जान दी है, बेटी! एक बार सुने उससे बात की तो तू ही जान जायेगी कि वह तुझ से कितना प्रेम करता है।" बुढ़िया यह कहकर वापस चली गई।

जब उसने यह खबर कमर को सुनाई तो यह बड़ा प्रसन्न हुआ। शुक्रवार आया, और वह अपनी प्रियतमा को मिलने की तैयारी करने लगा।

"बेटा! अभी तो दुपहर की नमाज में काफी वक्त है। दाढ़ी बढ़ी हुई है। नाई को बुलवाती हूँ।" बुढ़िया ने कहा। कमर उसकी बात मान गया।

थोड़ी देर बाद एक नाई आया। उसने कमर को देखते ही कहा- "क्यों बाबू! आजकल आप इतने कमज़ोर क्यों दिखाई देते हैं?"



"पिछले दिनों में जरा बीमार था। अब तबीयत ठीक है।" कमर ने कहा।

शुक्रवार के दिन यदि हजामत बनाई जाये तो कहा जाता है, सत्तर आपत्तियाँ टल जाती है। आँखों और बदन के लिए भी यह अच्छा है।" नाई ने कहा।

नाई की बकवास सुनते सुनते कमर ऊब गया। "यह बकवास क्या लगा रखी है। तुरन्त दाढ़ी बनाओ।" उसने कहा।

तब भी नाई ने अपना काम न शुरु किया। "अभी अच्छा समय नहीं आया है। थोड़ी देर और है। उसके बाद हजामत के लिए अच्छा समय है। आप शायद जानना चाहें कि क्यों? आज कुज और बुध एक ही ग्रह में प्रवेश कर रहे हैं। परन्तु एक बात है। लगता है, आप किसी से मिलने जा रहे हैं। नये व्यक्तियों से मिलने के लिए आज का दिन अच्छा नहीं है। इसलिए हो सकता है कि कोई खतरा हो।

कमर ने गुस्से में कहा-"तू अपनी बकवास बन्द करता है कि नहीं? मैने तुझे हजामत बनाने के लिये बुलाया है, ज्योतिष बखारने के लिए नहीं।"





"बाबू! अब ग्रहों के बारे में इतनी लापरवाही मत दिखाइये। बहुत खतरा है। आप क्या समझ रहे हैं?" नाई ने कहा।

"अरे भाई! तू मुझे कहाँ से आ मिला? मैं नहीं जानता कि इस मादाद शहर में ज्योतिष बतानेवाला कोई और नाई भी है। क्या तू ही मेरे भाग्य में लिखा था?" कमर ने पूछा।

"ज्योतिष की क्या बात हुजूर! मैं रसायन, गणित, वास्तुकला, तर्क, व्याकरण, कुरान.... मैं सब जानता हूँ। फिर मेरे अनुभव और उम्र का भी ख्याल रखिये।" नाई ने कहा।

कमर और अधिक न बर्दाश्त कर सका। नाई को उसने पैसे देते हुए कहा-"न मुझे तू चाहिये, न तेरी हजामत ही। यह पैसा लेकर जा चला जा।" उसने कहा।

"आप फिजूल पैसा देंगे तो क्या में लूँगा? मैं तो केवल आपकी सेवा करना चाहता हूँ। पैसे न भी दें तो कोई बात नहीं। मैंने आपके पिता जी की बहुत सेवा की। वे मेरी सलाह के बगैर कुछ न करते थे, आप उनके लड़के ही तो हैं न?" नाई ने कहा।

कमर उबकर, नाई को, नौकरों से बाहर निकलवाना ही चाहता था कि वह दाढ़ी में पानी लगाकर हजामत बनाने लगा। पर उसकी जवान चलती जाती थी। किन किन मन्त्रियों की किन किन महाकवियों की उसने हजामत की थी, और कैसे उन्होंने उसकी प्रशंसा की थी, वह सब सुनाने लगा। आखिर उसने पूछा-"आप जरा जल्दी में लगते हैं, क्या बात है?"

"मैं एक मित्र के पर दावत के लिए जा रहा हूँ।" कमर ने उससे कहा।

"आप मुझे भी साथ आने दीजिये। अच्छा ही है।" नाई ने कहा।

"मैं जिस जगह जा रहा हूँ, वहाँ और कोई नहीं आ सकता।" कमर ने कहा।

"वह.... मैं सब जान गया। यानी कोई स्त्री-मित्र है। देखिये बाबू! मेरे साथ रहने से आपका भला ही होगा। स्त्रियों से बातचीत करने में बड़ा खतरा है। मैंने दुनियाँ देखी है। मैं आप पर कोई आपति नहीं आने दूँगा।" नाई ने कहा।

"छी! कर जवान बन्द। अपना काम कर।" कमर ने कहा।

नाई ने अपना काम पूरा किया था कि नमाज भी शुरू हो गई। नाई को भेजकर जल्दी जल्दी कपड़े पहनकर वह काजी के घर की ओर दौड़ा क्योंकि पहले ही देरी हो गई थी। काज़ी के घर का दरवाजा खुला हुआ था। कमर दरवाज़ा खोलकर ऊपर की मञ्जिल पर जा ही रहा था कि काजी मस्जिद से वापिस आ गया।

परन्तु नाई ने कमर को न छोड़ा। वह चला तो गया, पर लुका-छुपा वह कमर के पीछे पीछे काजी के घर तक आया और उसके घर के सामने



बैठ गया। कमर के अन्दर जाने के बाद काजी को आता देख उसने सोचा-"अब हुजूर, अच्छी आफत में फँसे हैं।"

दुर्भाग्य से काजी को घर आते ही एक गुलाम स्त्री पर गुस्सा आया। उसने उसको मारा भी। वह गला फाड़कर रोने लगी। एक गुलाम उसे बचाने आया, काजी ने उसे भी खूब पीटा। यह सब नाई बाहर बैठा सुन रहा था। उसने समझा कि काजी, कमर की हड्डी पसली एक कर रहा था। वह तुरन्त चिलाने लगा-"बचाओ...... बचाओ..... काजी मेरे मालिक को मार रहा

है।" पाँच-दस आदमी इकट्ठे हो गये। "क्या बात है?" उन्होंने पूछा।

शोर सुन कर, काज़ी बाहर आया। उसने पूछा-"मेरे घर के सामने यह होहल्ला क्या कर रखा है?"

नाई ने आगे बढ़कर कहा-"मेरा मालिक आपकी लड़की से मिलने आया है, यह सन्देह कर क्या आपने मेरे मालिक को नहीं मारा है?"

"मेरी लड़की? और तुम्हारे मालिक का मिलना? कहीं तेरी अक्ल तो नहीं मारी गई है?" काजी ने पूछा।

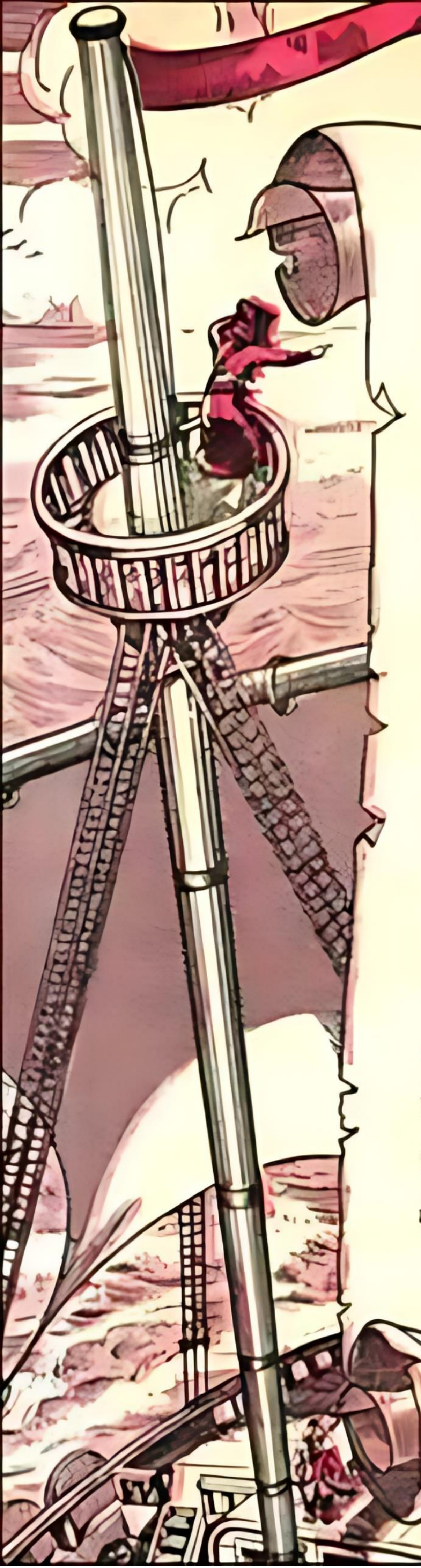
"आप भी क्या कह रहे हैं। मैंने उन्हें अपनी आँखो से आपके मकान में घुसते देखा है।" नाई ने कहा।

तुरत काजी ने अपना सारा पर ढुँढवाया। उपरली मञ्जिल पर कमर, काजी की लड़की से मिल भी न पाया था कि इस बीच यह होता शुरु हो गया। वह एक कमरे में, एक खाली सन्दूक में छुपकर बैठ गया। औरों के साथ, नाई ने भी सारा मकान खोजा। जब उसकी नज़र उस सन्दूक पर पड़ी, जिसमें कमर छुपा हुआ था, वह सब ताड़ गया। यह सिर पर सन्दूक रख कर बाहर कूदा। वह बाहर जा रहा था कि उसे ठोकर लगी, वह नीचे गिर गया, साथ सन्दूक भी गिरा। सन्दूक में छुपे कमर का पैर टूट गया।

उसके सन्दूक से बाहर आते ही भीड़ ने उसे घेरना चाहा। कमर जेब में से सोने की मोहरें लेकर बाहर बिखेरना लगा। लोग उसे छोड़कर मुहरों के लिए भागे।

जैसे वैसे मौत से वह बचा। लड़खड़ाता लड़खड़ाता लुका- छुपा वह घर पहुँचा। उसी दिन रात को, बसादाद शहर छोड़कर कमर कहीं चला गया।





नाविक सिन्दबाद

उसे नींद कहिये, या बेहोशी। ऐसा लगा, जैसे एक साल गुजर गया हो। जब मैं फिर उठा तो मुझे धूप और रोशनी दिखाई दी। मुझे बड़ी खुशी हुई। मैं एक बड़े हरे मैदान में लेटा हुआ था। मेरी तमेड नदी के किनारे बँधी हुई थी। मेरे चारों ओर इथोपियनों की भीड़ खड़ी थी।

मुझे जागा जानकर, वे मुझसे बातें करने लगे। क्योंकि में उनकी भाषा न जानता था, इसलिए मैं उनको जवाब न दे सका। इतने में एक आदमी ने आगे बढ़कर, शुद्ध अरबी भाषा में पूछा-"आप कौन हैं कहाँ से आये हैं? हमारे देश में आपको क्या काम है? हम लोग किसान हैं। हम जब अपने खेतों में पानी देने आये तो हमने, नदी में बहते हुए समेड़ पर आपको सोते हुए देखा। हमने तमेड़ को रोका। उसे किनारे पर बाँधा और आपको यहाँ लाकर लिटा दिया। आप जब तक स्वयं न उठें, तब तक उठाना हमने उचित न

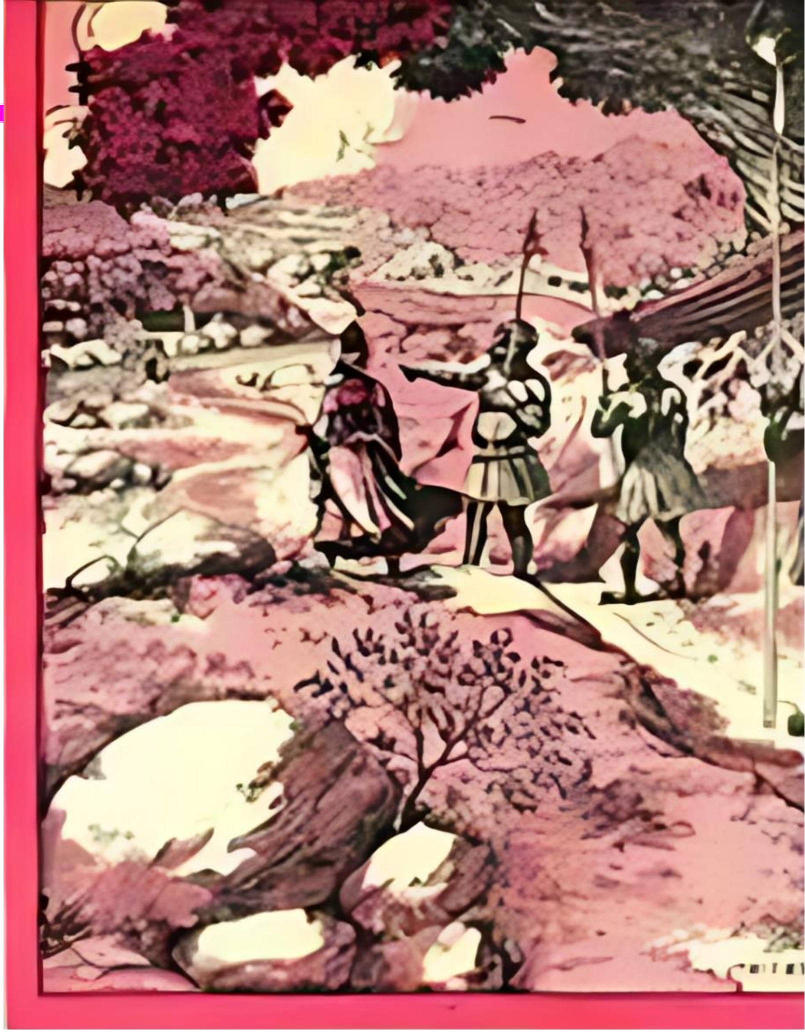
छठवीं समुद्र यात्रा

समझा। इसलिए हम चुपचाप खड़े रह गये। बताइये आप यहाँ कैसे आये।"

"मैं भूख से मरा जा रहा हूँ। पहले थोड़ा खाने को दीजिये, फिर आप जो चाहेंगे, यह बताऊँगा।" मैने कहा।

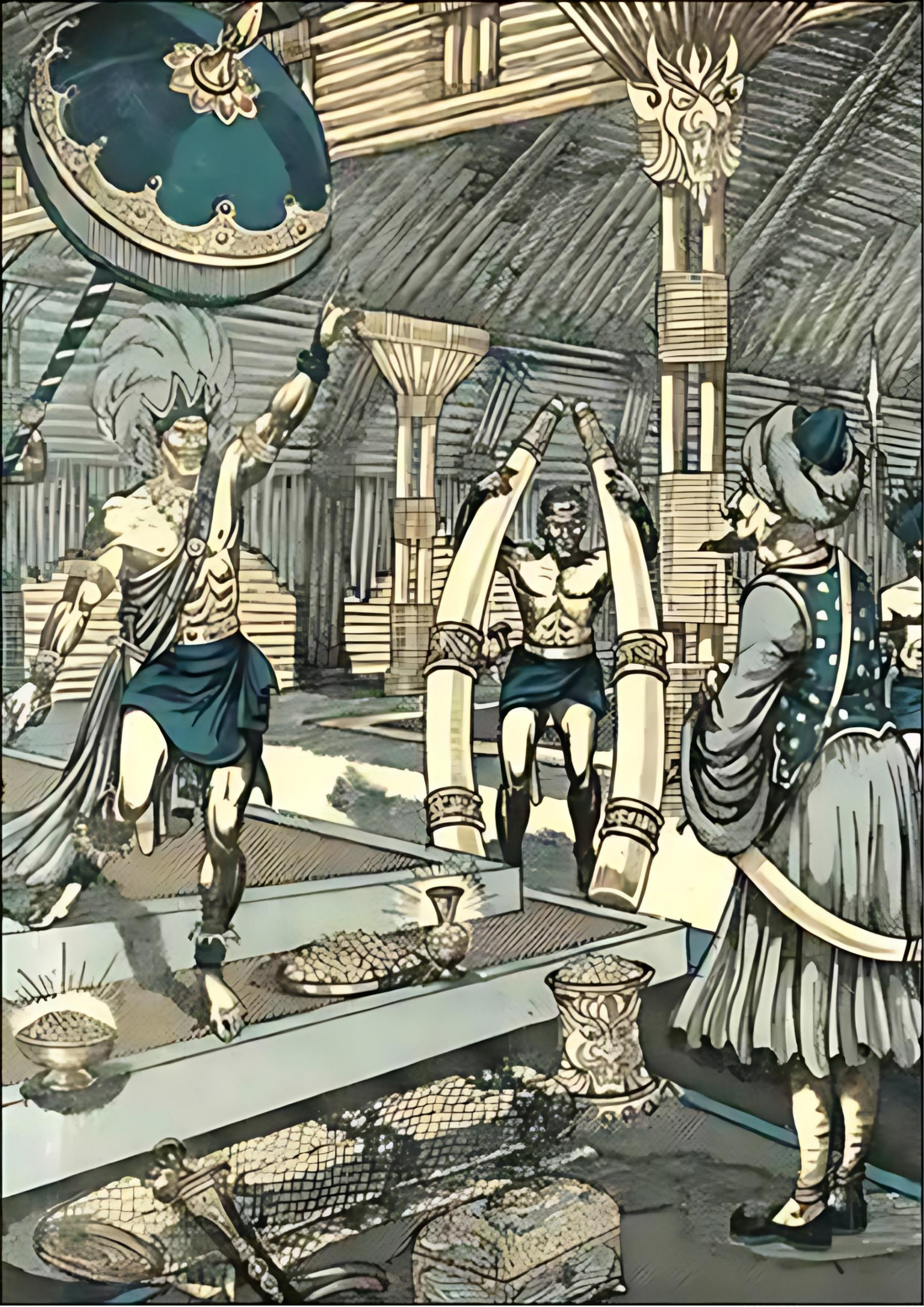
तुरन्त उन्होंने मुझे पेट भर भोजन खिलाया। मेरी जान में जान आई। मैंने उनको अपना किस्सा सुनाया। मेरी कहानी सुनकर वे आश्चर्यपूर्वक आपस में बातें करने लगे। जिस व्यक्ति ने मेरी बातों का अनुवाद किया था, उसी ने उनकी बातों का मेरे लिए अनुवाद किया। उन्होंने मुझे राजा के पास ले जाने की सोची, ताकि मैं उसे अपनी कहानी सुना सकूँ। मैं भी उनके निश्चय से सहमत था। वे तमेड़ और उस पर रखी धन-सम्पदा को ढोकर मुझे राजा के पास ले गये।

राजा ने सादर मेरा स्वागत किया। उनके आदेश पर, मैंने विस्तारपूर्वक अपनी कहानी सुनाई। मैने जीते जी मुसीबतों से निकला था, इसलिए वह बहुत खुश हुआ, उसने मुझे बधाई दी। मैंने थैलियाँ खोलकर उसे दिखाया कि मैंने मुसीबतों को झेलकर क्या पाया था।



मेरे लाये मोती, हीरों को देखकर राजा बहुत सन्तुष्ट हुआ। वह मोती हीरों का मशहूर पारखी था। मैंने एक एक तरह की एक एक मोती उसको भेंट में दी। इसके बदले में उसने मेरा बहुत आदर-सत्कार किया और अपने राज-महल में ही मुझे अतिथि के रूप में रखा। इस तरह में राजा और उसके सामन्तों का स्नेह प्राप्त कर सका।

उन सब ने मेरे देश और बग़दाद के शासन के बारे में कई प्रश्न किये। मैंने खलीफा हरून अल रशीद की खूब प्रशंसा



की। सब सुनकर राजा ने कहा-"साफ जाहिर है कि तुम्हारे सलीका बहुत योग्य हैं। उनके प्रति मुझे स्नेह हो रहा है। इसलिए तुम्हारे द्वारा मैं उनको उपहार भेजने की सोच रहा हूँ। क्या तुम उन्हें ले जाओगे?"



"दीजिये, जरूर उनके पास ले जाऊँगा। यही नहीं, उनसे यह भी कहूँगा कि आप स्नेह के पात्र हैं, और वे भी आपसे स्नेह-सम्बन्ध स्थापित कर सकते हैं।"

तुरन्त राजा ने खलीफा को भेजने के लिए उपहार मँगवाये। उनमें लाल मणियों से जड़ी एक मुराई थी, जो एक अंगुल मोटी थी, और छः फीट बड़ी। उसके अन्दर सुपारी के बराबर मणियाँ थीं। एक कालीन भी दी, जो साँप के धर्म से बनी हुई थी। उस कालीन की विशेषता यह थी कि उस पर रोगियों के लेटने से उनका रोग दूर हो जाता था और वे स्वस्थ हो जाते थे। उन्होंने दो सौ बड़े बड़े कपूर के गोले भी दिये। इनके अलावा दो बड़े बड़े हाथी के दान्त दिये। और तो और जेवर-जवाहरातों से, सजी एक दासी भी दी।

खलीफा के लिए एक पत्र देते हुए राजा ने कहा-"बहुत कम उपहार भेज रहा हूँ। इस कारण तुम अपने खलीफा से, मेरी तरफ से माफी माँगो। यह भी कहो कि मैं उनको कितना पसन्द करता हूँ। परन्तु सिन्दबाद मुझे खुशी होती, अगर तुम यहीं रह जाते। मैं ज़िन्दगी भर तुम्हें किसी प्रकार की कमी न होने दूँगा। ये उपहार में किसी और के हाथ भेज दूँगा। क्यों, यहाँ रहोगे? बताओ।"

"मुझे माफ़ कीजिये महाराज। जल्दी ही, बसरा के लिए जहाज छूटनेवाला है।

मैं अपना देश, बाल-बच्चे, सम्बन्धियों को देखने के लिए बहुत व्याकुल हूँ। मुझे जाने दीजिए। मैं कभी आपका उपकार न भूलूँगा।" मैंने कहा।

राजा मुझे ज़बरदस्ती वहाँ रखना न चाहता था। इसलिए उसने जहाज के कप्तान और मुसाफिरों को बुलाकर मेरी देखभाल करने के लिए कहा। उसने मेरा जाने का खर्च भी दिया। कितने ही उपहार देकर मुझे विदा किया। वे उपहार अब भी मेरे पास है।

मैं राजा और मित्रों से विदा लेकर अल्लाह की मेहरबानी से सीधे बसरा गया और वहाँ से बगदाद पहुँचा। जहाज से उतरते ही, मैं राज-महल गया खलीफा से मिला और उन्हें सलाम करके, राजा का पत्र उन्हें दिया।

खलीफा ने मेरा दिया हुआ पत्र पढ़ा। उपहारों को जाँचा और उन्होंने पूछा-"जिस राजा ने ये उपहार भेजे हैं, क्या वह सचमुच बहुत धनी है?"

"हुजूर, इसमें कोई सन्देह नहीं है। वह धनी ही नहीं, बहुत कार्य-कुशल और म्यायशील भी है। उनके राज्य में प्रजा इतनी खुश है कि प्रजा और राजा में कोई फासला नहीं है, झगड़ा नहीं है। वह वस्तुतः हमारे स्नेह का पात्र है।" मैने जवाब दिया।

स्खलीफा ने भी मुझे बहुत-से इनाम दिये। कई अधिकार दिये और अपने दरबार के मुन्शी को बुलाकर मेरे अनुभव भी लिखाये। उसने आज्ञा दी कि मेरी कथाओं को देश के इतिहास में सम्मिलित किया जाये।

फिर मैं अपने घर गया, अपने बन्धु-मित्रों से मिला और आराम से, सुखपूर्वक जिन्दगी बसर करने लगा।





दण्डकारण्य का एक भाग, बहुत पहले, कुम्भक वन नाम से भी जाना जाता था। लोगों में यह अफवाह फैली हुई थी कि कुम्भक नाम का राक्षस जङ्गल में, कहीं भूमि में एक बड़ा किला बनाकर रहा करता था। परन्तु किसी ने उस राक्षस को नहीं देखा था, न उसने किसी को सताया था। यही नहीं, जो लोग उस प्रान्त में रहा करते थे, उनका हमेशा कोई न कोई भला होता रहता। किसी को सोना मिलता, तो किसी को ईन्धन इकट्ठा करते करते चन्दन की लकड़ियाँ मिलती। कई को जेवर-जवाहरात की थैलियाँ मिलती। यह सब कुम्भक की ही कृपा थी। यह वहाँ के लोगों की धारणा थी।

उस वन में इधर उधर झोपड़ियाँ बनाकर, गरीब रहा करते थे। उनको कई आवश्यक चीजें वन में ही मिल जाती भी। जो लोग मेहनत कर सकते थे, उनकी जिन्दगी आराम से कट रही थी। जङ्गल में रहनेवालों को कभी कभी विचित्र आदमी दिखाई दिया करते। वे आदमी जङ्गल के रहनेवाले न थे। पर जो कोई उनसे मिलता था, बातें करता, उनका अवश्य लाभ होता। इस तरह दिखाई देनेवाला मनुष्य, लोगों का ख्याल था, कुम्भक ही था।

उस कुम्भक वन में, कर्दम नाम का एक गरीब अपनी पत्नी और एक वर्ष के लड़के के साथ एक झोपड़ी बनाकर रहा करता था। उसकी पत्नी का नाम रेवती था, लड़के का नाम गोपाल। कर्दम की उम्र पचीस वर्ष की थी। हट्टा कट्टा था। वह रोज जङ्गल में जाता, ईन्धन इकट्ठा करता और उसे बेचकर परिवार

श्री भीमसेन पाण्डेय

का पालन-पोषण करता। खाने-पीने की चीजें उसे जङ्गल में ही मिल जाती थी। वह अपनी पत्नी और बच्चे को बहुत प्यार करता था। हर रोज काम करने के बाद, वह पत्नी के लिए, जङ्गली फूल और झील से कमल के फूल ले आता। एक दिन शाम को रेवती रसोई कर रही थी। कर्दम का पर आने का समय न हुआ था।

"जिन्दगी मौज में गुज़र रही है, पर पति के लिए इतना परिश्रम करना अच्छा नहीं है, तिस पर यह सरदी का मौसम है। अन्धेरा हो जाता है और वह घर काँपता काँपता आता है। अगर हमारे पास रुपया होता तो हमें ये मुसीबतें न झेलनी पड़ती।" रेवती ने सोचा। उसे चूल्हे में जलते अङ्गारे सोने के टुकड़े-से लगे। "ये सचमुच सोने के टुकड़े हो तो क्या अच्छा हो।" उसने सोचा।

ठीक उसी समय किवाड खटखटाने की आवाज-सी हुई। उसने सोचा कि उसका पति समय से पहले ही वापस आ गया है। उसने जाकर किवाड़ खोला।

बाहर एक बूढ़ा खड़ा था। उसने कन्धे पर एक बोरी में कोई भारी चीज़ रख रखी



थी। उसे सरदी के कारण काँपता देखकर रेवती ने उससे पूछा-"कौन हो बाबा? अन्दर आओ।"

"बड़ी भली हो बेटी। तुमने बड़े पुण्य किये हैं। क्या थोड़ी देर आग के पास हाथ सेंकने दोगी? मैं फिर अपने रास्ते चला जाऊँगा। ठण्ड के कारण हड्डियाँ भी ऐंठ गई हैं।" बूढ़े ने कहा।

बूढ़े के अन्दर आने के बाद रेवती ने किवाड़ बन्द कर दिये। फिर उसने टोकरे में से शाक-सब्जी निकाली। बूढ़े के लिए भी रसोई करने लगी। बूढ़े ने चूल्हे के पास जाकर पूछा-"क्यों बेटी? अच्छी तरह गुज़र हो रही है न!"

"हाँ हाँ, हो रही है। इस जङ्गल में हमें सब चीजें मिलती हैं।" रेवती ने कहा।

थोड़ी देर हो गई। खाना पककर तैयार होने को था। पति के आने का समय कभी का हो चुका था। उसको न आता देख वह सोच रही थी कि उसकी देरी का क्या कारण हो सकता है?

जैसे वह उसके मन की बात सुन रहा हो, बूढ़े ने पूछा-"क्या कर्दम रोज इतनी देर करके आता है?" उसने पूछा।





रेवती हैरान हो गई। उसने पूछा-"क्या तुम उन्हें जानते हो बाबा?"

"क्यों नहीं जानता बेटी? जो यहाँ रहते हैं, मैं उन सब को खूब जानता हूँ। तुम्हारे घर की बगल से में कितनी ही बार गया हूँ।" बूढ़े ने कहा।

रसोई के खतम होने के कुछ देर बाद कर्दम पर पहुँचा। उसने बूढ़े को नहीं पहचाना। न उसे देखकर उसे आश्चर्य ही हुआ। उसने पत्नी से पूछा-"लगता है, आज हमारे पर कोई अतिथि आया हुआ है। मुझे बड़ी भूख लग रही है। जल्दी भोजन परोसो।" दोनों के भोजन करने के बाद, बूढ़े ने रेवती से कहा-"आज तुम्हारी मेहरबानी से पेट भर गया। क्या अब मुझे जाने की इजाजत दोगी?"

तुरन्त कर्दम ने कहा-"इतनी देर हो गई है। अब जङ्गल में कहाँ अकेले जाओगे बाबा? आज यहीं ठहर जाओ। बड़ी ठण्ड पड़ रही है बाहर।"

"हाँ बाबा! कल सवेरे उठकर चले जाना। चटाई बिछाती हूँ। कम्बल भी दूँगी, आराम से सो जाना।" रेवती ने कहा।

बूढ़ा वहाँ रहने के लिए मान गया। रेवती ने बच्चे को खिलाकर, स्वयं भोजन किया। बुढ़ा, झोंपड़े के एक कोने में लेट गया और नाक बजाने लगा। दूसरी तरफ कर्दम, रेवती और उनका लड़का लेटे हुए थे।

अन्धेरे में पति को हँसता सुन, रेवती ने पूछा-"क्यों हँस रहे हो?"

"देख! इस कुम्भक पर भी क्या नौबत आई है। भूमि में उसका एक बड़ा किला है, कितने ही नौकर-चाकर हैं। पर आज यहाँ आया, हमारा दिया हुआ रुखा सूखा भोजन किया, फटा-पुराना कम्बल

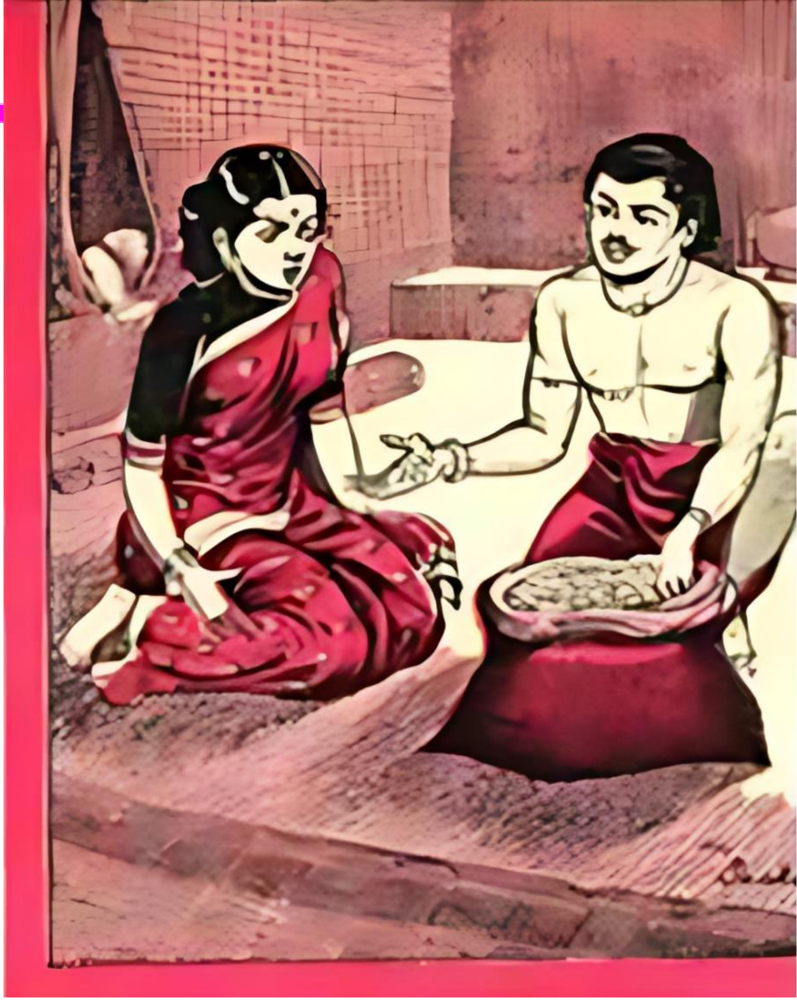
ओढ़कर जमीन पर सोया हुआ है।" कर्दम ने सोते हुए बूढ़े की ओर देखकर कहा।

रेवती ने डर के कारण काँपते हुए पूछा-"कुम्भक? राक्षस? अगर मुझे यह मालूम होता तो मैं किवाड़ न खोलती।"

"उसका आतिथ्य कर तुमने अच्छा ही किया। यह सचमुच बड़ा भलामानस है। जो कोई उसके साथ अच्छा बर्ताव करता है, यह उसका उपकार करता है। अगर तुम उसे अन्दर नहीं आने देती तो शायद वह हमारा कोई अपकार करता। तुमने उसे भोजन भी खिलाया। इसलिए अब कोई डर नहीं है।" कर्दम ने कहा।

रेवती कुछ सोचती सो गई।

जब वह उठी तो काफी सवेरा हो चुका था। कर्दम रोज सवेरा होने से पहले ही बाहर चला जाता था। पर उस दिन वह सोता रहा। उसने उसे उठाया-"देखो, कितनी देर हो गई है। हम से तो वह बड़ा ही अच्छा निकला। यह उठकर भी चला गया है। उसने किसी से कुछ कहा भी नहीं।"



"देखो, बोरी छोड़ गया है। शायद हमारे लिए ही छोड़ गया है। देखें इसमें क्या है!" कर्दम ने कोने में पड़ी बोरी खींची और उसको खोला।

यकायक रेवती की आँखें चौंधिया गई। बोरी में हजारों चमचमाती मुहरें भरी हुई थीं।

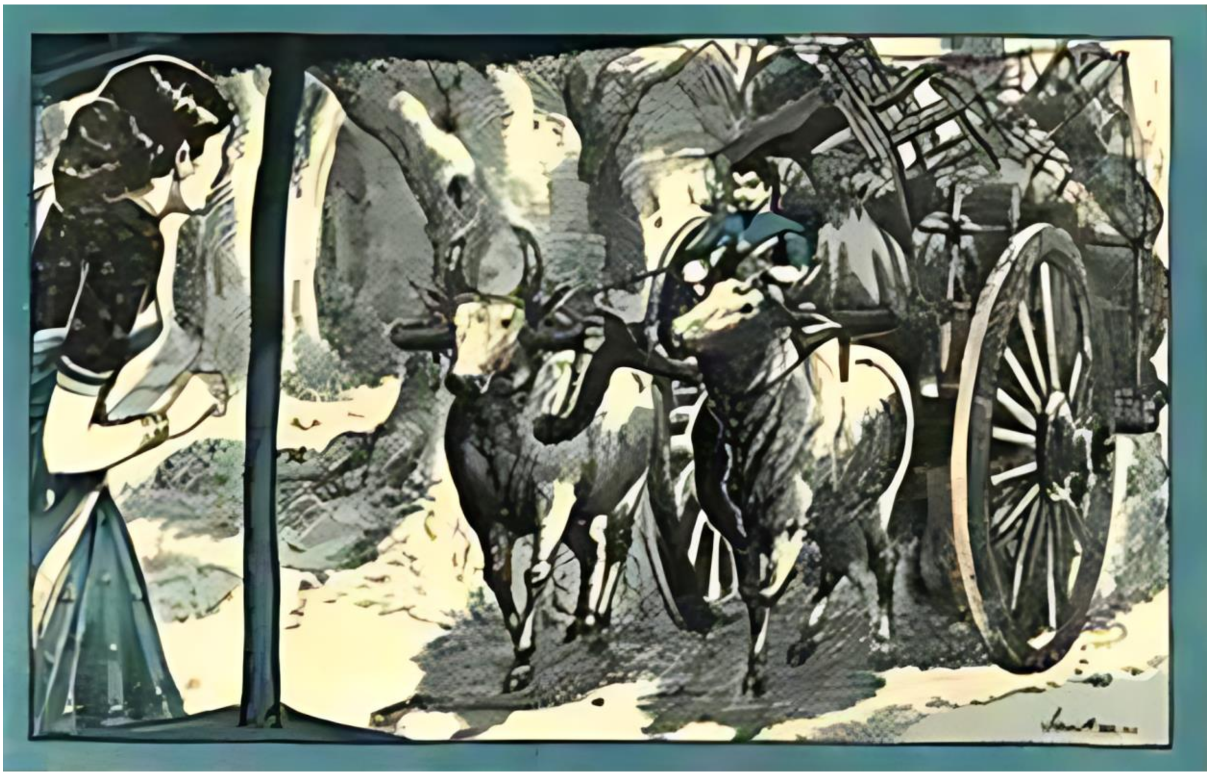
"मैंने कहा था न वह बूढ़ा कुम्भक ही है! और किसके पास होगा इतना सोना? अगर किसी को मालूम हो गया कि हमारे पास इतना सोना है, तो खतरा है। इसलिए खर्च के लिए सौ मुहरें रख लो, बाकी सब पेड़ के नीचे गाड़ देंगे।" कर्दम ने पत्नी से कहा।

पति-पत्नी ने मिलकर, मुहरोंवाली बोरी घर के सामनेवाले पेड़ के नीचे गाड़ दी। कर्दम उस दिन जङ्गल न गया। कुछ मुहरें लेकर शहर की ओर गया।

रेवती तब बड़ी खुश थी। अब उसके पति की मेहनत करने की जरूरत न थी। भले ही कितना खर्च करे, पर इतना धन था कि वह कभी कम न हो सकता था। अगर कर्दम समय पर न आता तो उसको यह देख डरने की जरूरत न थी कि किसी साँप ने उसे काटा होगा, या कोई पेड़ उस पर गिर पड़ा होगा। यह चौबीसों घण्टे घर में रह सकता था।

उसने कितने ही सपने देखे। लकड़ी लेकर घर और बड़ा करना था। घर के चारों ओर बगीचा लगाना था। बच्चे के लिए खिलौने और कपड़े खरीदने थे। अपने और बच्चे के लिए सोने के गहने बनवाने थे। पर में चान्दी के बर्तनों की जरूरत थी।

वह यह सोच रही थी कि कर्दम गाड़ी में वापिस आया। गाड़ी में घरवार की चीजें भरी हुई थीं। उन चीज़ों को देखकर रेवती बड़ी खुश हुई।



"मैंने गाड़ी भी खरीद ली है। शहर जाने के लिए गाड़ी तो चाहिए ही। इतना रुपया रखकर उतनी दूर कौन पैदल जाएगा?" कर्दम ने कहा। उसके हाव-भाव से लगता था कि शहर में वह पीकर आया था।

"जितना पैसा ले गए थे, क्या वह सब खतम हो गया है? या कुछ बाकी रह गया है?" रेवती ने पूछा।

"खतम हो गया हो तो क्या और नहीं है?" कर्दम ने पूछा।

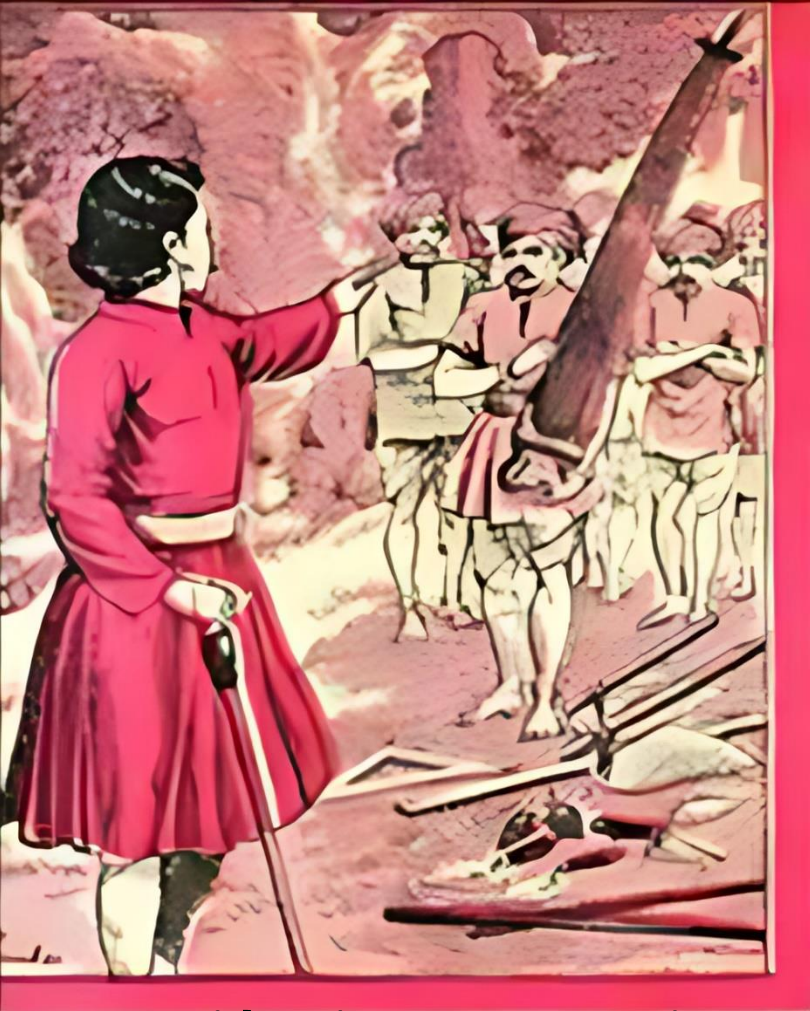
"अगर हो भी तो क्या रुपया-पैसा इस तरह बरबाद किया जाता है?" रेवती ने पूछा।

"मुझ से पूछनेवाली तू कौन होती है? मेरी मर्ज़ी। अगर चाहे तो सारी मुहरें आज ही खर्च कर दूँगा।" कर्दम ने उससे कहा।

रेवती को, पति ने कभी डाँटा-डपटा न था। उसे बिगड़ा हुआ देखकर यह बहुत दुखी हुई। परन्तु उसके साथ तू तू मैं मैं करना उसने अपनी ही गलती समझी।

तब से रोज़ कर्दम, पेड़ के नीचे गड़े धन में से जितना धन चाहता उतना लेता। गाड़ी में शहर जाता।





चीजें खरीदता; खूब शराब पीकर घर बापस आता।

बीतों के रखने के लिए जगह न थी। झोपड़ी में बैठने की भी जगह न थी। कितनी ही वस्तुएँ झोपड़ी के बाहर रख दी गई थीं। वे धूप-पानी में खराब हो रही थीं। अगर रेवती कुछ कहती सुनती भी तो कर्दम उसे बुरी तरह पीटता।

जैसे जैसे ऐश्वर्य बढ़ता गया, वैसे वैसे रेवती का सुख भी कम होता गया। अब कर्दम को, न पत्नी पर प्रेम था, न बच्चे पर ही। उसका दिल हमेशा शराब पर रहता। नहीं तो सोने पर।

वह रोज चीजें इस तरह खरीदता, जैसे वह इस फिक्र में हो कि यह पैसा जितनी जल्दी समाप्त हो उतना ही अच्छा है।

"हम तो इससे पहले ही अच्छे थे।" रेवती ने सोचा। उसने सोचा, अगर उसने उसे न रोका टोका तो जल्दी ही सारा धन काफूर हो जायेगा। यह उससे झगड़ी।

"सच पूछा जाये तो यह धन तेरा नहीं है। वह बूढ़ा, यह धन मेरे लिए ही छोड़ गया था। कितनी ही चीजें खरीद रहे हो, पर मेरे लायक कोई भी चीज नहीं है। सब से अधिक हमें एक बड़े घर की जरूरत है।" रेवती ने अपने पति से कहा।

"अगर तु कुछ चाहती है तो मुझ से क्यों नहीं कहती? तेरे हाथ में सोना दूँ तो तू जानती नहीं कि उसे कैसा खर्चा जाये।" कर्दम ने कहा। वह शहर आकर, राज, बढ़ई वगैरह को बुला लाया और एक बड़ा पर बनवाने लगा। दिन बीतते गये। पर वह मकान पूरा होता नजर न आया। और इस बीच सोना भी खतम होने को हुआ।

जब कर्दम पर में न था; रेवती ने एक काम करनेवाले को बुलाकर कहा- "इस पेड़ के नीचे खोदो।" बहुत खोदने के बाद, उसे वह बोरी मिली। उसमें बहुत कम मोहरें ही रह गई थी।

"सिर्फ इतनी ही!" रेवती ने बोरी देखकर, विस्मित स्वर में कहा। जिसका उसे भय था, वही हुआ। सोना समाप्त हो गया था। सोना ही खतम हो जाता तो ऐसी कोई बड़ी बात न थी। उससे भयङ्कर पटना एक और घटी। उस दिन शाम को पति के लिए राजा के सैनिक आये। उस समय कर्दम खूब शराब पीकर, नशे में चूर पड़ा था।

"तुझे एक खजाना मिला। तूने राजा को क्यों नहीं इस बारे में सूचित किया? राजा की आज्ञा है कि तुझे हाथ-पैर बाँधकर उनके सामने हाजिर किया जाये।" राजा के सैनिकों ने कहा।

"हाथ बाँधोगे क्यों?" कर्दम कुल्हाड़ी लेकर उन पर लपका। राजा के सैनिकों ने उसको छुरी से मारा। रेवती यह सब देखकर घबरा गयी और जोर से चिल्ला उठी। वह सहसा बेहोश गिर गई।



उस बेहोशी में उसको ऐसा लगा, जैसे उसे कोई बुला रहा हो। उसने असें खोल कर देखा।

"रेवती, रेवती!" कर्दम ही उसे बुला रहा था तभी सबेरा हो रहा था। कोने में बूढ़ा कम्बल ओढ़कर सो रहा था। यहाँ और कोई न था।

"क्यों, क्यों रो रही हो? कोई खराब सपना तो नहीं आया था?" कर्दम ने उसकी ओर देखकर हँसते हुए पूछा।

जब रेवती ने अपने पति को पहले की तरह देखा, तो उसकी खुशी का ठिकाना

न रहा। "हाँ, बड़ा बुरा सपना आया है।" पति-पत्नी, बातें कर रहे थे कि बूढ़ा भी उठ बैठा।

"सूर्योदय होनेवाला है। मुझे जाना है। मुझे थोड़ा माण्ड पीने को दो।" कर्दम ने कहा।

"अच्छा बेटी! तो मैं भी जाता हूँ।" बूढ़े ने कहा।

"ठहर बाबा! तुम्हें भी थोड़ा माँड़ देती हूँ। जाने कितनी दूर जाओगे और कहाँ क्या खाओगे।" रेवती ने कहा।

"नहीं, पहले ही देरी हो गयी है।" कहता हुआ बूढ़ा चला गया।

"बाबा! तुम अपनी गठरी यहीं छोड़ कर जा रहे हो।" कर्दम चिल्लाया।

"वह भी क्यों बेटा, फिजूल का बोझ है। अगर उसमें तुम्हारे लायक चीज हो तो ले लेना।" बूढ़े ने कहा।

"क्या मैंने न कहा था, यह तेरे लिए इनाम है?" कर्दम ने रेवती को देखकर हँसते हुए कहा।

उसने घबराकर कहा-"मुझे कुछ नहीं चाहिये। इसे बाबा को ही दे दो।"

कर्दम ने, कोने में पडी बोरी को उठाकर कहा-"अरे बाप रे बाप! कितना भारी है! शायद सोना है!"

"नहीं, नहीं जो कुछ हमारे पास है, वह काफी है। दौड़ कर जाओ बाबा को जाकर उसकी बोरी दे आओ।" रेवती ने और घबराते हुए कहा।

"अच्छा, जैसी तेरी मर्जी। बोरी लेकर कर्दम बाहर दौड़ा। रेवती को ऐसा लगा, जैसे उसके मन पर से किसी ने बहुत बड़ा बोझ उतार दिया हो। उसने अच्छी तरह जान लिया कि अनावश्यक श्री सम्पदा से दुख ही दुख हैं, सुख नहीं।





[९]

[भुवन सुन्दरी को लेकर प्रारम्भ हुआ ग्रीक ट्रोजन युद्ध अखिरी दशा में था। दोनों तरफ के अच्छे योद्धाओं की मृत्यु हो चुकी थी। ट्रोय के पतन के लिये रूपधर ने एक बात सोची। इस बात के अनुसार एक काठ का घोड़ा बनाया गया और उसके पेट में योद्धाओं को बिठाया गया। घोड़े और चौर्यनाथ को समुद्र तट पर छोड़कर ग्रीक सैनिकों ने यह दिखाया, जैसे वे मैदान छोड़ कर चले गये हों। ट्रोजन उस घोड़े को नगर के अन्दर ले जाकर विजयोत्सव मनाने लगे।]

बाहर शोर-शराबा हो रहा था और काठ के घोड़े के अन्दर ग्रीक योद्धा जान हथेली में लेकर बैठे थे। दोर्दण्ड तो घुट-घुटकर रोने भी लगा। केवल नवयोध ही, पत्थर की तरह बैठा था। तीक्ष्णदृष्टि का फेंका हुआ भाला पोड़े को बीन्धकर , उसके सिर के पास लगा था। पर वह न हिला। और तो और वह इस उम्मीद में बैठा था कि कब वह घोड़े से बाहर निकलता है और कब अपना पराक्रम दिखलाता है। वह रह रह कर रूपधर की ओर देख रहा था। इस हमले का रूपधर ही नेता था।

शाम को भुवन-सुन्दरी अपने पति अरिभयङ्कर के साथ काठ का घोड़ा देखने आई। उसका मन बहलाने के बहाने,

वह घोड़े के चारों ओर घूमी, जगह जगह उसको ठोंककर देखा और घोड़े में छुपे योद्धाओं की पत्नियों की आवाज की उसने नक़ल की। उनका नाम लेकर उन्हें बुलाया। काठ के घोड़े के पेट में, रूपधर के पास बैठे, प्रताप और देवमय भी अपने नामों के लिये जाने पर बाहर कूदने को तैयार हुए। परन्तु रूपधर ने उन्हें रोका।

रात हुई। दिन भर के विजयोत्सव से थके-माँदे, ट्रोयवासी गाढ़ी निद्रा में सो रहे थे। कहीं कोई कुत्ता तक नहीं भोक रहा था। केवल भुवन सुन्दरी न सोई थी। उसके कमरे के बाहर एक गोलाकार दीप था, जो ग्रीक योद्धाओं के लिए सङ्केत था।

आधी रात हुई। चन्द्रोदय होने को था। उस समय चौर्यनाथ बिल्ली की तरह शहर पार कर गया। उसने बज्रकाय की समाधि पर एक ज्योति जलाई। उसी समय प्रत्यान्ना ने समुद्र में खड़े जहाज़ों को, एक बड़ी जलती मशाल घुमाकर इशारा किया।

इस सङ्केत के उत्तर में राजा ने अपने जहाजों में रोशनी करवाई। ग्रीक जहाज किनारे की ओर जल्दी जल्दी आने लगे।



राजा का सङ्केत पाते ही प्रत्यान्ना ने काठ के पीछे के पास जाकर कहा-"सब तैयार है।" तुरन्त रूपधर ने दोर्दण्ड से कहा-"घोड़े का दरवाजा खोल दो।"

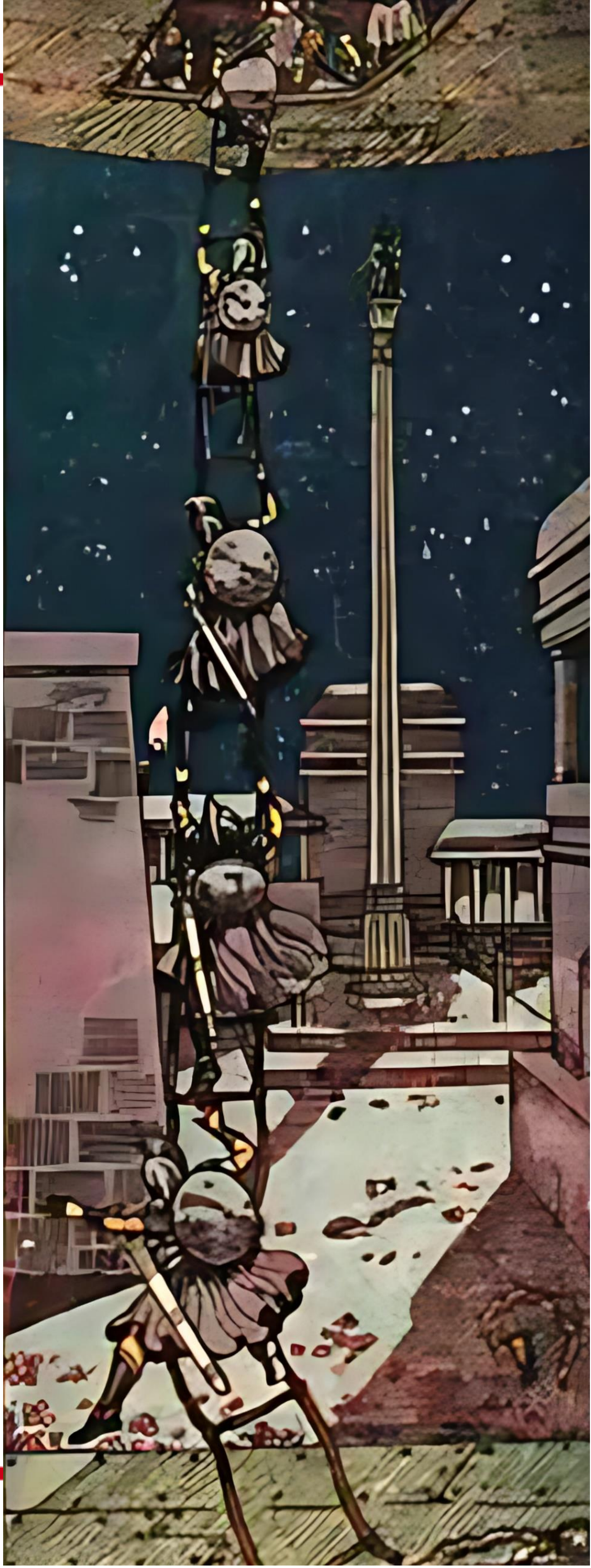
घोड़े के पेट में दरवाजा खुल गया। एक योद्धा बाहर कूदा। उसकी गरदन टूट गई और वह वहाँ ठण्डा हो गया।

फिर ताड़ के पेड़ की सीढ़ी उतारी गई। ग्रीक योद्धा एक एक करके चुप चाप नीचे उतरे। उनमें से कुछ जहाजों से उतरकर आनेवाले सैनिकों के लिए, किले के फाटक खोलने दौड़े और कुछ ने राजमहल के ऊँघते पहरेदार को जाकर मार दिया।

प्रताप के मन में सिवाय, अपनी पत्नी भुवन-सुन्दरी के, और कुछ न था। वह भुवन सुन्दरी के घर की ओर भागा।

फिर भयङ्कर हत्याकांड शुरू हुआ। चान्दनी में ग्रीक योद्धा गलियों में घूम-घूम कर लोगों को मारने लगे।

यद्यपि रूपधर ने, भुवन सुन्दरी और उसकी सास को, निशस्त्र व्यक्तियों को न मारने का वचन दिया था, तो भी ग्रीक





योद्धाओं ने उस वचन का पालन न किया। वे हर घर में घुसे। उन्होंने सोते हुए वृद्ध, स्त्री, पुरुषों के गले काट डाले।

वर्धन, उसकी पत्नी और लड़कियाँ एक मन्दिर में जा छुपे। वर्धन ने ग्रीक योद्धाओं से युद्ध करना चाहा। परन्तु उसकी पत्नी ने कहा-"तुम बूढ़े हो गये हो। अब जाकर क्या युद्ध करोगे? जान बची रहे, यही काफी है।"

वर्धन ने पत्नी की बात सुनी। तभी उसने ग्रीक योद्धाओं को अपने लड़के का पीछा करते हुए देखा और उसके देखते देखते उसको नवयोध ने तलवार से मार भी दिया। यह देख वर्धन हाथ पर हाथ घरे न बैठा रह सका। यह मन्दिर से बाहर निकला। यह ग्रीक योद्धाओं के हाथ में पड़ गया। प्रोक योद्धा उसको राजमहल के फाटक के पास ले गये और उसको वहीं मार दिया।

भुवन-सुन्दरी के घर प्रताप के साथ रूपधर भी गया। उन दोनों ने मिलकर अरिभयङ्कर के साथ बहुत देर तक युद्ध किया। आखिर भुवन सुन्दरी ने ही पीछे से अरिभयङ्कर को छुरी से भोंककर मार दिया।



यद्यपि प्रताप, बहुत दिनों से अपनी पत्नी को मारने की सोच रहा था, पर उसके सौन्दर्य को देखकर उसने अपना इरादा बदल लिया। उसने अपनी तलवार दूर फेंक दी। भुवन सुन्दरी का हाथ पकड़कर, वह उसे जहाज़ों की ओर ले गया।

प्रत्यान्ना ट्रोजन था, तो भी उसने ग्रीक लोगों की मदद की। यह भूलकर कुछ ग्रीक योद्धाओं ने प्रत्यान्ना के एक लड़के को घायल कर दिया। एक और को मारने के लिये गलियों में उसका पीछा कर रहे थे कि उस समय रूपधर ने प्रत्यान्ना के



लड़कों को केवल बचाया ही नहीं, परन्तु उसके घर के सामने सिंह का चर्म भी लटका दिया। यह इसका सङ्केत था कि कोई उस घर में न आये जाये।

इसी तरह प्रशंस का पर भी, ग्रीक लोगों के कोप का शिकार न हुआ।

ट्रोयनगर में, ग्रीक लोगों ने अपना हत्याकाण्ड शुरू ही किया था कि वर्धन की बड़ी लड़की बुद्धिमति देवी के मन्दिर में जा छुपी। परन्तु ग्रीक योद्धा उसको पकड़कर ले गये। हर जीवित ट्रोजन स्त्री को ग्रीक सैनिकों ने पकड़कर रख लिया। राजा ने स्वयं जालिनी को ले लिया।

हत्याकाण्ड के बाद ग्रीक सैनिकों ने ट्रोय नगर को लूटा, दीवारे तोड़ दी। घरों में आग लगा दी। देवताओं को बलि दी। जो कुछ लूटा, उसे आपस में बाँट लिया।

वीरसिंह की पत्नी, नवयोध के हाथ लगी। उसके एक लड़का था। उसको ग्रीक सैनिकों ने मार दिया।

वज्रकाय की प्रियतमा प्रमोदिनी के भविष्य के बारे में कुछ नोक झोंक हुई। "ट्रोयनगर के पतन के बाद, प्रमोदिनी को मेरी समाधि पर बलि दे दो" वज्रकाय ने यह इच्छा मृत्यु से पहले अपने मित्रों के समक्ष प्रकट की थी। बज्रकाय ने, अपने लड़के को, व अन्य कुछ ग्रीक सैनिकों को, सपने में प्रत्यक्ष हो कर धमकाया था कि यदि प्रमोदिनी को बलि न दिया गया, तो ग्रीक अपने देश वापिस न जा सकेंगे। काशुंक ने भी कहा कि यदि प्रमोदिनी की बज्रकाय को बलि न दी गई तो अच्छा नहीं होगा क्योंकि वह उसे बहुत चाहता था। पर राजा प्रमोदिनी की बलि का विरोध

कर रहा था। "पहिले ही काफी रक्तपात हो चुका है। यही नहीं, मृत व्यक्ति की इच्छा को जीवित व्यक्ति को बलि देकर पूरा करना क्या अच्छा है? यह बहुत ही असङ्गत मालूम होता है।"

"क्योंकि तुमने जालिनी हथिया ली है, इसलिये तुम उसकी बहन की प्राण रक्षा करना चाहते हो।" इस तरह कई ग्रीक योद्धाओं ने राजा का विरोध किया। यह मतभेद झगड़े में बढ़ गया। अगर बात बढ़ती गई तो खतरा सम्भव था, इसलिये रूपधर ने राजा को सलाह दी कि वह औरों की इच्छानुसार ही यह काम होने दे।

प्रमोदिनी को बलि देने का निश्चय किया गया। उसको लाने का काम रूपधर को सौंपा गया। बलि देने के लिए वज्रकाय का लड़का नवयोध स्वयं तैयार था। श्रीक सैनिकों के सामने, बज्रकाय की समाधि पर प्रमोदिनी की बलि दी गई। उसके बाद ग्रीक सैनिकों ने शास्त्रोक्त रीति से उसका अन्त्येष्टि संस्कार किया।

प्रमोदिनी के मर जाने के बाद, ग्रीक सैनिकों की वापसी यात्रा के लिए हवा अनुकूल चलने लगी। ग्रीक



सैनिकों का ख्याल था कि प्रमोदिनी की बलि से वज्रकाय की आत्मा को शान्ति प्राप्त हुई थी और उसी की कृपा से अनुकूल हवा चलनी शुरु हुई थी। वे तुरन्त अपने जहाजों में जा बैठे, और स्वदेश के लिए यात्रा शुरू कर दी।

वर्धन की पत्नी रूपधर के हाथ में आई। परन्तु वह ग्रीक सैनिकों के अत्याचार के कारण बहुत बिगड़ी हुई थी और उनको कोस रही थी। ग्रीक सैनिक उसका किसी तरह मुख न बन्द कर सके। इसलिये उन्होंने उसे मार कर समुद्र में फेंक दिया।

बापिसी यात्रा में कई ग्रीक नेता अलग अलग रास्ते पर चले गये। कई तो अपने देश पहुँचे ही नहीं।

ट्रोय से चलने के बाद, पहले पहल राजा और उसके भाई प्रताप में अनपन हुई। "हवा अनुकूल है। चलो तुरन्त चलें।" प्रताप ने कहा। "बुद्धिमति को बलि दिये बगैर कैसे जाया जाय?" राजा ने पूछा। "बुद्धिमति ने हमारा क्या उपकार किया है कि हम उसको बलि दें? उसने तो शत्रु की ही मदद की है।" प्रताप ने कहा। इस बात पर दोनों में मतभेद हुआ, और दोनों अलग अलग रास्ते पर चले गये। फिर वे अपनी जिन्दगी में कभी न मिले। राजा, नवयोध, वृद्ध नावद्योत सीधे घर पहुँचे। प्रताप के जहाजों को अनुकूल हवा न मिली। वे तूफान में फँस गये। कई नौकाएँ डूब भी गई। जैसे तैसे वह मिश्र पहुँचा। आखिर जब उसने स्वदेश में पैर रखा तो राजा की किसी ने हत्या कर दी थी।

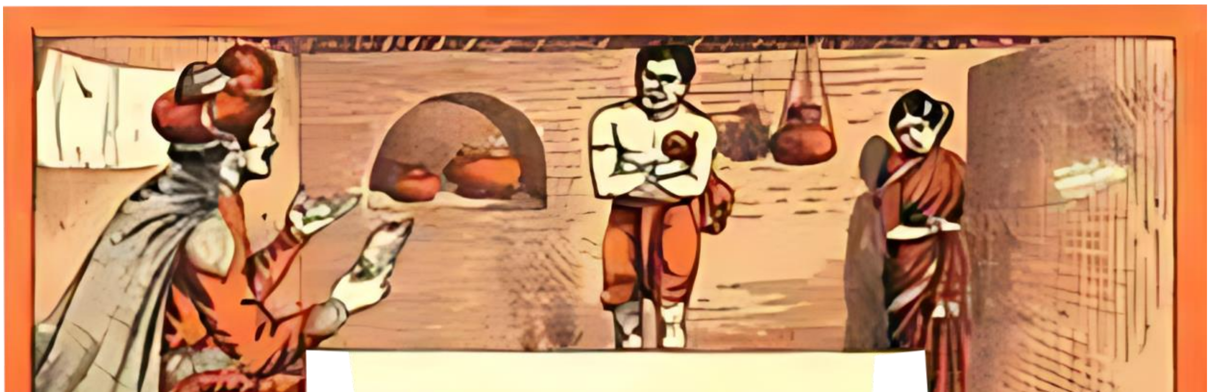
दिव्यदृष्टि वाला फायक रास्ते में ही मर गया था। बुढ़ापे में देवमय की हत्या की गई।

ट्रोय नगर के पतन के आखिरी दिनों में, जिसने युद्ध में विशेष पटुता दिखाई थी, और जो काठ के घोड़े की योजना का निर्माता था, वह रूपपर दस वर्ष बाद स्वदेश पहुँचा।

इस तरह ट्रोय नगर का पतन हुआ। ग्रीकों के नष्ट करने से पहिले वह संसार में उत्तम नगरों में से एक था। उसके बाद, प्रशंस के वंश वालों ने उसका कई बार निर्माण किया। पर पहले जैसा वह कभी उन्नत न हो पाया।

(समाप्त)





लालच का फल

एक राजा का एक किसान मित्र था। जब कभी राजा शिकार खेलने जाता, उसके पर में एक दिन रहता, शकरकन्दी भुनवा कर खाता और अपनी राजधानी वापस चला जाता।

यद्यपि राजा उसका इतना गहरा मित्र था, तो भी उसने राजा के कारण कोई फायदा नहीं उठाया था।

एक बार किसान को राजधानी जाना पड़ा। किसान की पत्नी ने एक गठरी में शकरकन्दियाँ बाँध कर दी। उसने कहा-"राजा को शकरकन्दी बहुत पसन्द है। ये ले जाकर उन्हें दे देना।"

"अरी पगली! राजा इस प्रकार के उपहार को देखकर क्या सोचेंगे?" उस किसान ने अपनी पत्नी से कहा।

"जब तुम इतनी दूर से ले जा रहे हो तो वे जरूर खा लेंगे। ले जाओ।" किसान की पत्नी ने कहा।

किसान ने पत्नी की बात ठुकरानी नहीं चाही। यह गठरी लेकर राजधानी की और चला। रास्ते में, गठरी में से छोटी छोटी शकरकन्दियाँ लेकर वह खाता गया। जब वह राजधानी पहुँचा तो गठरी में एक ही शकरकन्दी रह गई थी।

"मैं इसे राजा को दूँगा। उसने कभी इतनी बड़ी शकरकन्दी न देखी होगी।" किसान ने सोचा। राजा के दर्शन के लिए किसान ने राजसभा में झाँक कर देखा। अन्दर दरबार लगा हुआ था। किसान राजा के आने की प्रतीक्षा करने लगा।

थोड़ी देर में दरवार ख़तम हुआ। राजा ने अपने मित्र से कुशल-क्षेम पूछा।

श्रीमती डी. मञ्जुलता

किसान ने गठरी में से शकरकन्दी निकाल कर कहा-"आप के लिए लाया हूँ।"

राजा बड़ा खुश हुआ। उसने पास खड़े सैनिक को बुलाकर कहा-"इस उपहार को हमारे खजाने में सुरक्षित रखो। खजाञ्ची से हज़ार मुहरें लेकर इस किसान को इनाम में दो।"

फिर राजा ने किसान की ओर मुड़कर कहा-"आओ, भोजन के लिए चलें।"

सब राज-कर्मचारियों को पता लग गया कि राजा ने न केवल एक ऐरे गैरे किसान को एक शकरकन्दी के लिए हजार मुहरें ही दीं, बल्कि उसको अपने साथ भोजन के लिए भी वे ले गये।

जब राजा उदार है तो क्यों न इसका फायदा उठाया जाये, यह सोच एक उच्च राज-कर्मचारी अगले दिन एक अच्छी नस्ल का थोड़ा ले गया। उसने उनसे कहा-"राजा! यह अच्छी नस्ल का घोड़ा आपको उपहार में दे रहा हूँ। मेहरबानी बनाये रखिये।"

जब राजा ने एक शकरकन्दी के लिए ही हजार मुहरें दी हैं तो न मालूम, इस घोड़े के लिए कितनी मुहरें देगा, वह कर्मचारी मन ही मन सोचने लगा।

यह बात राजा ताड़ गया। उसने सैनिक को बुलाकर कान में कहा-"हमने खजाने में रखने के लिए एक शकरकन्दी दी थी, उसे ले आओ।"

सैनिक शकरकन्दी ले आया। राजा ने उसे कर्मचारी को देते हुए कहा-"इस शकरकन्दी का दाम हजार मुहरे हैं। तुमने मुझे थोड़ा दिया है, इसलिए मैं तुम्हें यह उपहार में दे रहा हूँ।"

कर्मचारी बड़ा निराश हुआ। पर उसको लालच का अच्छा फल मिला।



CHANDAMAMA (Hindi) JULY 1957 Regd. No. M. 8462



भुवन - सुन्दरी